कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास की दिशा में नए प्रयास

छोटे किसान योजनाबद्ध विकास की ओर

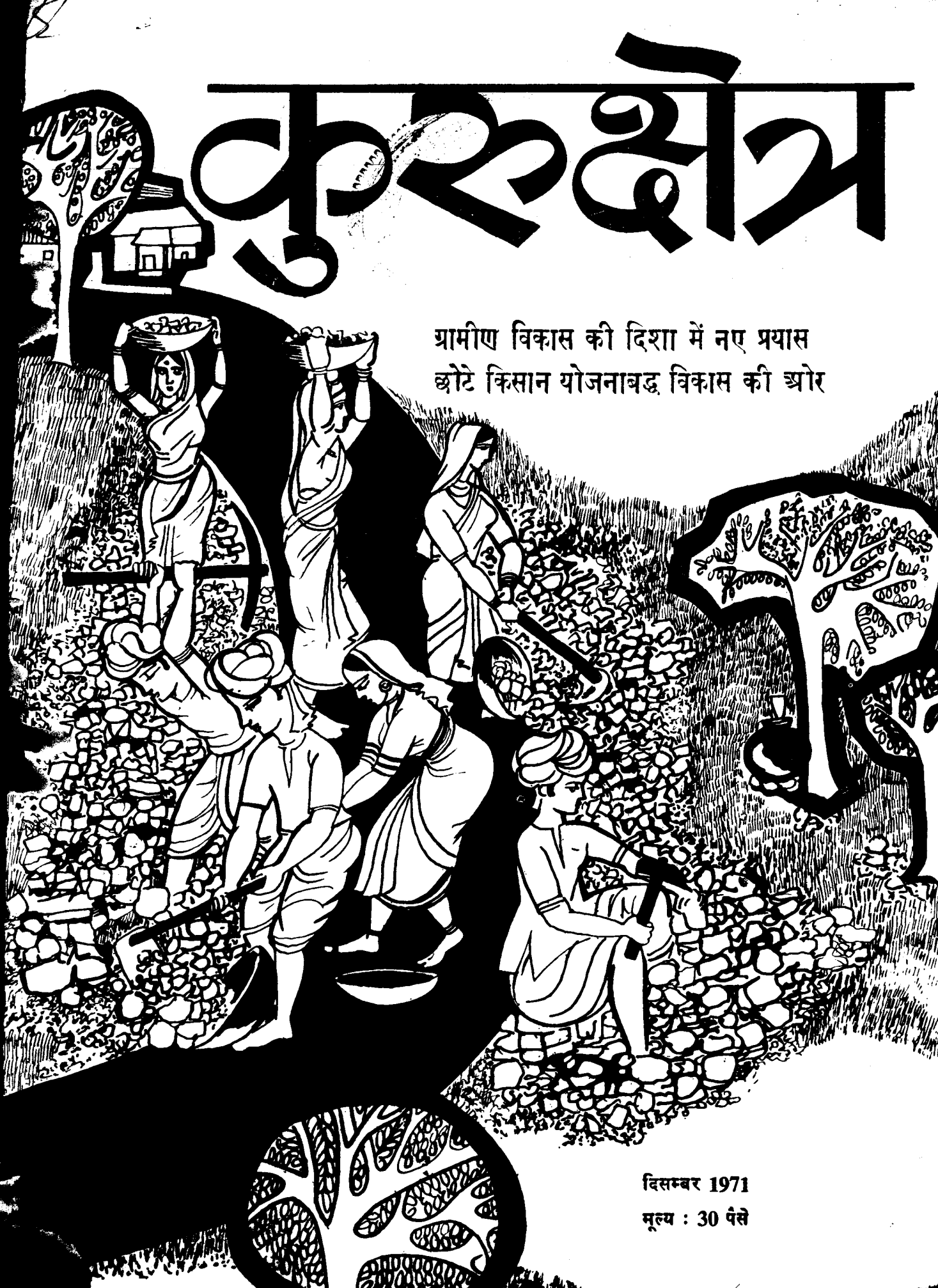

दिसम्बर 1971

मूल्य : 30 पैसे

हुगली जिले में हरित क्रान्ति के बढ़ते चरण

पिछले वर्ष सितम्बर में पश्चिम बंगाल में भयंकर बाढ़ से हुगली जिले के लोगों को अनेक कष्ट उठाने पड़े। खेतों में खड़ी हुई फसलें तबाह हो गईं और लगभग 14 करोड़ रु० की कीमत की धान की फसल नष्ट हो गई। इसके साथ ही संचार व्यवस्था भी अस्त-व्यस्त हो गई। वहां के अधिकारियों ने इस क्षेत्र के लोगों के पुनर्वास का कार्य अपने हाथ में लिया। रबी की फसल उगाने के लिए जोरदार कार्यक्रम चलाया गया। किसानों को आर्थिक सहायता, ऋण, खाद, और बीज आदि की अन्य सुविधाएं प्रदान की गईं।

इन सब बातों का बड़ा अच्छा परिणाम रहा। समय पर ही सहायता मिल जाने से किसानों में विश्वास पैदा हुआ। इससे यह आशा बंध गई कि हुगली जिले के किसान अपने उत्साह और दृढ़ निश्चय से हरित क्रान्ति कार्यक्रम में व्यवधान नहीं आने देंगे। हुगली के उन इलाकों में जहां अब तक चावल की खेती की जाती थी, अब गेहूं भी बोया जा रहा है। पिछले वर्ष के मुकाबले इस वर्ष गेहूं की खेती दुगुने क्षेत्र में यानी 60,000 एकड़ भूमि में की गई।

सिंचाई की सुविधाएं

सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध हो जाने के कारण 'बहुफसली' कार्यक्रम अपनाया जा रहा है। बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में 1,600 उथले नलकूप लगाए जा चुके हैं और अन्य 200 नलकूप लगाने का कार्य जारी है। लगभग 3,000 पम्प बांटे जा चुके हैं। 16 गहरे कुओं की खुदाई की जा चुकी है और वहां सिर्फ बिजली पहुंचाने का काम बाकी है। इस इलाके के लिए 20 उत्थापक सिंचाई योजनाएं बनाई गई हैं और उन्हें एक महीने में चालू कर दिया जाएगा। 55 बांधों के बन जाने से इस इलाके के किसान 20,000 एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र में बोरो धान और गेहूं की खेती कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त उपज की कीमत लगभग 10 करोड़ रु० है। सिंचाई की इन सुविधाओं के कारण किसान वर्ष में दो या तीन फसलें उगा सकेंगे।

हुगली जिले की मुख्य उपज धान है और लगभग 4 लाख 93 हजार एकड़ भूमि में इसकी खेती जा रही है। यहां की दूसरी मुख्य पैदावार पटसन है। 58,000 एकड़ भूमि में इसकी खेती होती है। इस इलाके में सब्जियां भी उगाई जाती हैं और इससे किसानों को बहुत लाभ होता है। इस वर्ष धान की 'बोरो' किस्म की खेती का क्षेत्रफल बढ़ाया गया है। बंजर भूमि के स्थान पर अब लहलहाते खेत नजर आते हैं। इस वर्ष लगभग 75,000 एकड़ भूमि पर धान की 'बोरो' किस्म की खेती की गई है।

उर्वरक की खपत

अधिक उपज देने वाली किस्मों की बुवाई करने के कारण उर्वरक की खपत में भी वृद्धि हुई है। इस साल इस इलाके के लिए खाद खरीदने के लिए 35 लाख रु० निर्धारित किए गए हैं। इसके साथ ही सहकारी और वाणिज्यिक बैंक किसानों को फसल उगाने के लिए भी ऋण देते हैं।

किसानों की बढ़ती हुई दिलचस्पी को देखते हुए 'लघु किसान विकास योजना' के अन्तर्गत इस जिले को अधिक से अधिक सिंचाई की सुविधाएं देने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। इस इलाके में हरितक्रान्ति को चालू रखने के लिए 3 वर्ष में इस योजना पर साढ़े छह करोड़ रु० खर्च किए जाएंगे।

1970-71 के दौरान हुगली जिले में लगभग 34,0000 टन धान की उपज हुई। 1967-68 के मुकाबले यह मात्रा एक लाख टन अधिक है।

मज़दूर मंज़िल
कुरुक्षेत्र

वर्ष 17 **कार्तिक 1893** **अंक 2**

इस अंक में — पृष्ठ

ग्रामीण विकास की दिशा में नए प्रयास — 2
फखरुद्दीन अली अहमद

छोटे किसान योजनाबद्ध विकास की ओर — 4
द० प० कनौजिया

लोकतन्त्र में ग्रामदान की भूमिका — 7
चन्द्रपाल सिंह

धरा का अभिषेक (कविता) — 8
डा० छैलविहारी गुप्त

महाराष्ट्र में कृषि उद्योग के क्षेत्र में सहकारी प्रयास — 9
अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

सहकारिता के बढ़ते चरण — 12
श्रीपाल सांगवान

हरित क्रान्ति का दूत बौना गेहूं — 13
कृष्णकुमार

राष्ट्रीय आय में लाख उद्योग का महत्व — 15
माधवानन्द देवलाल

कृषि क्रान्ति में पशुपालन कार्यक्रम — 17
श्रीराम पाण्डेय

कृषि विकास की नवीन मान्यताएं — 20
भैरवदत्त सनवाल

धरती का भगवान है (कविता) — 21
लक्ष्मीप्रसाद मिश्र 'कवि हृदय'

समाजवाद और हमारी परम्पराएं — 22
भगवानदास

गुड़ तुझमें कितने गुण ! — 23
नरेन्द्र भट्ट

उत्पादन वृद्धि के लिए कृषि अर्थशास्त्रियों का संवर्ग बनाया जाए — 25
वी० श्रीनिवास राव

ये कब तक पशुओं जैसी जिन्दगी जीते रहेंगे ? — 26
दुर्गाशंकर त्रिवेदी

किसान का धन — 28
जयसिंह

टीन का डिब्बा (कहानी) — 30
भगवान सहाय त्रिवेदी

पाठकों की राय — 32
प्रकाशवीर शास्त्री

केन्द्र के समाचार — 34

●

दूरभाष 382406

एक प्रति 30 पैसे : वार्षिक चन्दा 3.00 रुपये

स० सम्पादक : महेन्द्रपाल सिंह

उपसम्पादक : त्रिलोकी नाथ

आवरण पृष्ठ : जीवन अडालजा

हमारा सहकारी आन्दोलन

पिछले मास की 6 से 12 तारीख तक देश में 'अ० भा० सहकारी सप्ताह' मनाया गया। चूंकि इस दशक को सहकारी विकास दशक की संज्ञा दी गई और यह सप्ताह इस दशक का पहला सप्ताह था, अतः इस सप्ताह के समारोहों का विशेष महत्व रहा। वैसे सप्ताह मनाने का हमरा उद्देश्य यही देखना था कि हमारा सहकारी आन्दोलन पिछले दशक में कितना आगे बढ़ा है, प्रगति में क्या क्या रुकावटें आई हैं और आगे हम आन्दोलन की गति को किस तरह तेज कर सकते हैं। सप्ताह के समारोहों में इन सभी बातों पर नजर डाली गई।

जहां तक पिछले दशक में हुई प्रगति का सम्बन्ध है, आंकड़ों की दृष्टि से आन्दोलन के सभी क्षेत्रों में कार्यवाहियां तेजी पकड़ती रहीं। 1960-61 में अल्प कालीन और मध्यकालीन ऋण के रूप में प्राथमिक समितियों ने 202 करोड़ रुपये वितरित किए जब कि 1970-71 में यह संख्या बढ़कर लगभग 600 करोड़ रु० हो गई। चौथी पंचवर्षीय योजना की अवधि में दीर्घकालीन ऋण की राशि लगभग 700 करोड़ रु० होगी। 1960-61 में सहकारी समितियों द्वारा 175 करोड़ रु० की खेती की उपज का धन्धा किया गया जबकि 1970-71 में यह संख्या बढ़कर 650 करोड़ रुपए हो गई। इस अवधि में इनके द्वारा 250 करोड़ रु० के रासायनिक खाद के वितरण का काम भी किया गया। उपभोक्ता सहकारी भण्डारों ने शहरी और देहाती क्षेत्रों में 605 करोड़ रु० के माल का कारोबार किया। देश में दो हजार से अधिक सहकारी विधायन इकाइयों को सहायता दी गई और कमजोर वर्ग के लोगों की सहायता के लिए मुर्गीपालन, मछलीपालन तथा श्रम सहकारी समितयां गठित की गईं। जहां एक और ग्रामीण विद्युत् सहकारी समितियों का निर्माण हुआ वहां दूसरी और 'इण्डियन फार्मर्स फर्टीलाइजर को-आपरेटिव लिमिटेड' की स्थापना करके रासायनिक खाद के निर्माण के क्षेत्र में भी सहकारिता का प्रवेश हुआ।

उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि इस दृष्टि से हमारा यह आन्दोलन पिछले दशक में काफी सफल रहा। पर आन्दोलन की यह स्थिति उस स्थूलकाय पुरुष की सी है जिसके शरीर में रस, रक्त, मांस, मेदा आदि सभी तत्व तो मौजूद हैं पर उसमें शक्ति, चुस्ती, स्फूर्ति आदि गुण विद्यमान नहीं। इस दृष्टि से आन्दोलन को मजबूत बनाने के लिए जरूरी है कि सहकारी समितियों के ढांचे को मजबूत बनाया जाए जिससे इनमें व्यावसायिक कुशलता आए। समितियों की प्रबन्ध व्यवस्था ठीक होगी तो कारोबार भी फल भार से लदा होगा। कर्मचारियों के लिए समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था हो और एक काडर बनाया जाए जिसमें अच्छी तरह से प्रशिक्षित और निष्ठावान ग्रामीण युवक लिए जाएं। नेतृत्व के समुचित विकास के बिना भी आन्दोलन जोर नहीं पकड़ सकता। अतः इस दिशा में भी हमें यथोचित प्रयास करने होंगे। जन, धन तथा अन्य संसाधनों के जुटाए बिना भी आन्दोलन में तेजी की सम्भावना नहीं। अतः जरूरी है कि कमजोर

[शेष पृष्ठ 24 पर]

ग्रामीण विकास की दिशा में नए प्रयास

[विकास केन्द्रों में प्रायोगिक अनुसन्धान प्रायोजना के मार्ग निर्देशन के लिए केन्द्रीय कृषि मन्त्री श्री फखरुद्दीन अली अहमद की अध्यक्षता में केन्द्रीय मार्ग निर्देशन समिति की स्थापना की गई है। समिति की पहली बैठक नई दिल्ली में 12 अक्तूबर, 1971 को हुई। बैठक में प्रायोजना की प्रगति के बारे में समीक्षा की गई और इस अवसर पर केन्द्रीय कृषि मन्त्री ने जो विचार व्यक्त किए वे यहां प्रस्तुत हैं।]

फखरुद्दीन अली अहमद

विकास केन्द्रों में प्रायोगिक अनुसन्धान प्रायोजना केन्द्र की देन है और उसे चौथी योजना में कार्यान्वित किया जा जा रहा है। योजना में इसके लिए एक करोड़ पैंतालीस लाख रु० के परिव्यय की व्यवस्था है। प्रायोगिक अनुसन्धान प्रायोजना का लक्ष्य विकास केन्द्रों का पता लगाने के लिए एक अनुसन्धान का तरीका और ढंग निकालना है और यह बताना है की इन केन्द्रों की विकास क्षमताओं को विकास आवश्यकताओं के वैज्ञानिक अध्ययन द्वारा किस तरह उन्नत किया जा सकता है और उन्हें जिला योजनाओं के तानेबाने में किस तरह बुना जा सकता है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम जिसे दो अक्तूबर, 1952 को शुरू किया गया था एक तरीका माना गया है जिसके द्वारा गांवों के सामाजिक और आर्थिक जीवन को बदलने की शुरूआत की जा सकती है। कार्यक्रम के अन्तर्गत जीवन को उन्नत करने के लिए हर गृहस्थ का सहयोग मांगा गया है। इस सम्बन्ध में जनशक्ति का समुचित लाभ उठाने की दृष्टि से दिसम्बर, 1957 में बलवन्तराय मेहता समिति की सिफारिशों के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना की गई। सामुदायिक विकास कार्यक्रम द्वारा समन्वित विकास के लिए एक प्रशासनिक इकाई के रूप में खण्ड का ढांचा खड़ा किया जिसका सम्बन्ध केवल ग्रामीण क्षेत्रों से था। ग्रमीण क्षेत्रों के नियोजित विकास के लिए जरूरी था कि आवश्यक सेवाएं गांवों में और उनके आसपास विकसित की जाएं। इसीलिए चौथी योजना में यह जरूरी समझा गया कि विकास केन्द्रों का कार्यक्रम शुरू किया जाए और एक ऐसा आवश्यक ढांचा तैयार किया जाए जिससे ये केन्द्र भावी विकास के लिए प्रकाश स्तम्भ बन सकें। हरी क्रान्ति के परिणामस्वरूप ग्रामीण विकास के क्षेत्र में बहुत सी समस्याएं पैदा हो गई हैं। परिवहन, संग्रहण, ऋण आदि बहुत सी सेवाओं में कमी महसूस हुई है।

देहाती क्षेत्रों के संगठन एक ऐसा माध्यम मुहैया करें जिससे माल और सेवाएं हर खेत या घर से वहां के समाज के सभी लोगों तक पहुंचती रहें।

इस सम्बन्ध में जिन सुविधाओं की कमी है उनका इन्तजाम करना होगा। इन कमियों का पता लगाना और उचित स्थानों पर आवश्यक सुविधाएं मुहैया करना प्रायोगिक अनुसन्धान योजना का प्रमुख लक्ष्य है। इस तरह सामुदायिक विकास कार्यक्रम को विकास केन्द्रों के साथ समवित्त क्षेत्र विकास कर्यक्रम के रूप में बदला जा सकता है।

प्रायोगिक अनुसन्धान प्रायोजना के सम्बन्ध में बहुत सा प्रारम्भिक कार्य योजना के प्रथम वर्ष की अवधि में पूरा हो चुका था। लेकिन वास्तविक कार्य अप्रैल 1970 से शुरू हुआ। अब सामुदायिक विकस विभाग के पराशर्म से राज्य सरकारों द्वारा बीस बुनियादी क्षेत्र चुन लिए गए हैं। इन बुनियादी क्षेत्रों को चुनने में इन महत्वपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखा गया है—उन्नत कृषि, आदानों और मशीनों का प्रयोग, हाट सुविधाओं की मौजूदगी, संचार व्यवस्था, जाग्रत स्थानीय नेतृत्व और अधिकाधिक जन सहयोग। बीस अनुसन्धान और जांच सेलों में अधिकांश प्रायोजना कर्मचारी चुन लिए गए हैं और वे प्रशिक्षित हो गए हैं। पश्चिमी बंगाल और पांडिचेरी में अनुसन्धान और जांच सेलों की स्थापना कुछ देर से हुई पर चूंकि प्रायोजना कर्मचारी भरती कर लिए गए हैं अतः इन दो केन्द्रों में काम शीघ्र ही पूरे जोर से शुरू होने वाला है। केरल, उत्तर प्रदेश और उड़ीसा-इन तीन राज्यों में समुचित सुविधाओं और उनके स्थान के बारे में अध्ययन के लिए आंकड़े इकट्ठे करने के सम्बन्ध में काम पिछले साल अगस्त में शुरू हुआ। इन बीस केन्द्रों में से सात केन्द्र केरल, मैसूर, गुजरात, उड़ीसा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र में स्थित हैं। खण्ड, शहर, बड़े गांवों तथा विपणन केन्द्रों के बारे में आंकड़े इकट्ठे करने में सम्बन्धित काम का पहला दौर पूरा हो चुका है। चुने हुए बुनियादी क्षेत्रों में एक ढांचे की आवश्यकता पूरी करने के लिए राज्य

सरकारों से कहा है कि वे विकास कार्यक्रम तैयार करें। फोर्ड फाउण्डेशन में स्थापित केन्द्रीय अनुसन्धान सेल सामुदायिक विकास विभाग को प्रायोजना की अनुसन्धान सेवा आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद कर रहा है।

केन्द्रीय अनुसन्धान सेल ने गुजरात के जूनागढ़ जिले में तलाला विकास खण्ड से सम्बन्धित प्रारम्भिक रिपोर्ट पूरी कर ली है। इनमें गांवों के बन्दोबस्त तथा तलाला शहर और पांच बड़े गांवों के बीच आन्तरिक कामकाज का उल्लेख किया गया है। प्रायोजना प्रतिवेदन में शीघ्र किए जाने वाले कार्यों के लिए प्राथमिकताओं के बारे में सिफारिशें की गई हैं। इनमें जोड़क सड़कें, छोटी सिंचाइयों के लिए बांध, गोदाम, शीत भण्डार सुविधाएं, तलाला में नियमित बाजार तथा बड़े गांवों में कृषि उपज के लिए संग्रह केन्द्र की स्थापना शामिल है। शेष सेलों के लिए ऐसे ही प्रतिवेदन तैयार किए जाने वाले हैं। तलाला तथा अन्य बुनियादी क्षेत्रों के लिए ढांचा कार्यक्रम लागू करने में राज्य सरकारों का सहयोग बहुत जरूरी है। राज्य सरकारों से कहा गया है कि वे कार्यक्रम के कार्यान्वयन में निर्देशन के लिए राज्य स्तरीय समन्वय समितियां और प्रायोजना स्तरीय समन्वय समितियां बनाएं। सामुदायिक विकास विभाग के परामर्श से जो प्रतिवेदन तैयार किए जा रहे हैं उन्हें सम्बन्धित प्रायोजना स्तरीय समितियां विचार विमर्श के लिए देख सकती हैं। ऐसा ख्याल है कि इन प्रतिवेदनों से स्थानीय जनता की आवश्यकताएं पूरी हो सकती हैं। इन प्रायोजना स्तरीय समितियों के द्वारा योजना के कार्यान्वयन के लिए आवश्यक स्थानीय सहयोग मिल सकेगा और ये विभिन्न विभागों के बीच समुचित समन्वय कायम कर सकेंगी।

यह विदित है कि पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार ने बहुत से कार्यक्रम शुरू किए हैं। अभी हाल में ग्रामीण रोजगार के लिए जो क्रैश योजना चालू की है और जिसे हर जिले में अमल में लाया जा रहा है, प्रायोगिक अनुसन्धान प्रायोजना के साथ समन्वित कर दिया जाना चाहिए क्योंकि इस क्रैश योजना का लक्ष्य भी ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी पूंजी का निर्माण करना है। लघु किसान विकास अभिकरणों को, जो विकास केन्द्र जिलों में शामिल हैं बुनियादी क्षेत्रों में छोटे किसानों की आवश्यकताओं पर ध्यान देना चाहिए। कमजोर वर्ग के लोगों की मदद के लिए लघुतम किसान और कृषि मजदूरों के कार्यक्रम भी चालू हैं। इनकी कार्रवाइयों में भी समन्वय की आवश्यकता है और इन योजनाओं में लगे धन का भी लाभ उठाया जा सकता है।

विकास कार्यक्रम के लागू करने के लिए धन का प्रश्न भी बुनियादी प्रश्न है। सरकारी अभिकरणों तथा निजी उद्यमियों दोनों के लिए ही यहां काफी गुंजाइश है। लीड बैंक जिला कार्यक्रम के अन्तर्गत उपलब्ध ऋण सुविधाओं तथा ऋण आवश्यकताओं के प्रारम्भिक सर्वेक्षण कर लिए गए हैं और विकास केन्द्र क्षेत्रों में ऋण की आवश्यकताएं अधिकतर सम्बन्धित लीड बैंकों द्वारा पूरी की जाएंगी। इस सम्बन्ध में 'स्टेट बैंक आफ इण्डिया' की योजना, जिसके अन्तर्गत एक सौ पचास शाखाएं कृषि की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए शुरू की जा रही हैं, महत्वपूर्ण है। इस योजना के बुनियादी क्षेत्रों में सभी उत्पादनशील उद्यमियों को ऋण मुहैया किया जाना चाहिए। यह भी सम्भव है कि भारत का औद्योगिक विकास बैंक (इन्डस्ट्रियल डेवलपमेण्ट बैंक आफ इण्डिया) भी कुछ दीर्घकालीन प्रायोजनाओं के लिए धन मुहैया करे। कृषि उद्योग निगम और राज्य उद्योग विकास निगम को चाहिए कि वे भी विकास केन्द्रों के प्रयासों में पूरा सहयोग दें।

गांव, शहर और बाजार केन्द्रों के बीच सम्बन्ध कायम करने के लिए यह जरूरी है कि एक कुशल परिवहन व्यवस्था कायम हो। कार्यक्रम को इस तरह विकसित किया जाए कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताएं प्राप्त करने के लिए दो से पांच मील से अधिक दूर न जाना पड़े। यह खुशी की बात है कि अधिकांश विकास केन्द्रों को सहकारी ऋण सुविधाएं उपलब्ध हैं और दूसरी आवश्यकताएं भी पूरी करनी होंगी। हमारे आगे यह एक बड़ी भारी चुनौती है लेकिन मुझे इसमें सन्देह नहीं कि राज्य सरकारों के सहयोग और इस समिति के निर्देशन से हम अपने प्रयास में सफल होंगे।

छोटे किसान योजनाबद्ध विकास की ओर

साख संस्थाओं द्वारा छोटे किसानों की साख की पूर्ति न करना, कुछ मामलों में साख मिलने की मंजूरी मिलने पर भी उसे अस्वीकृत करना तथा हाल ही में डा०हजारी समिति द्वारा छोटे किसानों को साख पर सस्ती ब्याज दर लागू करने की सिफारिश को सहकारिता विभाग के पंजीयकों द्वारा अस्वीकृत करना कृषि अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में महत्वपूर्ण घटनाएं हैं। इन घटनाओं ने शासन को छोटे किसानों के मामले का अध्ययन कर उनके हित में नीतियां निर्धारित करने के लिए प्रेरित किया है। छोटे किसानों की समस्या का अध्ययन अखिल भारतीय ग्रामीण साख पर्यवेक्षण समिति, 1969 (आल इण्डिया रूरल क्रेडिट रिव्यू कमेटी 1969) द्वारा किया गया था तथा इस समिति ने कृषक समाज के इस वर्ग के योजनाबद्ध आर्थिक विकास के लिए देश के चुने हुए जिलों में लघु कृषक विकास अभिकरण (स्माल फारमर्स डेवलपमेंट एजेंसी) की अग्रगामी योजना की स्थापना का सुझाव दिया था।

कृषक परिवारों का यदि उनकी भूमि की नाप के आधार पर अध्ययन किया जाए तो उनकी तीन श्रेणियां बनती हैं—(1) 7.5 एकड़ और इससे अधिक की जोतवाला वर्ग, (2) 2.5 से 7.49 एकड़ एकड़ वाला वर्ग एवं (3) 2.49 एकड़ वाला छोटे से छोटा वर्ग। सारे देश में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी में क्रमशः 28.4, 37.1 एवं 34.5 प्रतिशत किसान आते हैं। लगभग 11 प्रतिशत किसानों की जोतें 1 एकड़ से कम हैं। द्वितीय श्रेणी के किसानों का प्रतिशत केरल प्रान्त में 81 प्रतिशत है। कुल मिलाकर सारे देश में छोटे किसान काफी संख्या में है, परन्तु वे कुल भूमि के छोटे भाग में ही खेती करते हैं।

इन छोटे किसानों को परिभाषित करना सहज नहीं है और न ही सारे देश के लिए छोटे किसानों को पहचानने के लिए एक मान निश्चित किया जा सकता है। फिर भी, छोटे किसान से तात्पर्य 2.50 एकड़ से 10 एकड़ तक के ऐसे किसान से है जो अपनी जीविकोपार्जन स्तर की खेती के अन्तर्गत व्यापारिक एवं आर्थिक कृषि की सम्भावनाएं संजोए हुए है। यदि इस वर्ग के कृषक को पशु-पालन जैसे पूरक धन्धे, सिंचाई सुविधाएं, कृषि के लिए उन्नत बीज, रासायनिक खाद, उन्नत यन्त्रों की पूर्ति, ट्रैक्टर से जुताई सुविधा तथा अन्य तकनीकी मार्ग-दर्शन दिया जाए तो वह अपनी छोटी जोत से अधिक उत्पन्न करने के लिए सक्षम हो सकेगा तथा विक्रय के लिए अतिरिक्त उपज पैदा कर सकेगा। इस तरह उसका व्यवसाय आर्थिक स्वरूप ले सकेगा। लघु कृषक विकास की इन सम्भावनाओं को ही असली जामा पहनाते हुए हरितक्रान्ति को गति देना है।

द० प्र० कनौजिया

छोटे किसानों के अध्ययन से निम्नलिखित चारित्रिक विशेषताएं निर्धारित की जा सकती हैं। इन विशेषताओं से जहां लघु कृषक को पहचाना जा सकता है, वहीं उसकी समस्याओं का परिचय भी प्राप्त किया जा सकता है।

1. देश में छोटे कृषकों की संख्या, विशेषतः घनी आबादी वाले प्रदेशों में काफी अधिक है।
2. अधिक संख्या में होते हुए भी छोटे किसान कुल भूमि के छोटे से हिस्से में ही खेती करते हैं।
3. बड़े किसानों की अपेक्षा शिकमी काश्तकारों में छोटे किसानों की संख्या अनुपाततः अधिक है।
4. छोटे भू-खण्डों पर खेती करने की वजह से इनका उत्पादन तथा आय कम है तथा ये मजदूरी के द्वारा कुछ अतिरिक्त आय कमाते हैं।
5. कृषि यन्त्रों एवं पशुधन के स्वामित्व की दृष्टि से इन किसानों की स्थिति अच्छी नहीं है।
6. चूंकि इन किसानों की ऋण अदा करने की क्षमता कम है तथा ये ऋण के लिए पर्याप्त भूमि जमानत के रूप मेंनहीं दिखा सकते, अतः ये बैंकों से साख प्राप्त करने की स्थिति में भी नहीं हैं। कई मामलों में जबकि ये ऋण का भुगतान करने की स्थिति में थे, इन्हें साख देने से इन्कार किया गया है। इसका प्रमुख कारण सहकारी समिति का संचालन करने वाले सम्पन्न एवं प्रभावशाली लोगों का परम्परावादी दृष्टिकोण तथा जातिवाद पर आधारित छोटे लोगों के प्रति मनोमालिन्य एवं उपेक्षा का भाव रहा है।
7. बड़े किसानों की अपेक्षा छोटे किसानों का यह वर्ग आधुनिक कृषि, विशेषतः रासायनिक खाद के प्रयोग की ओर अधिक जागरूक है।
8. बड़े किसानों की अपेक्षा ये छोटे किसान भूमि पर पूंजी विनियोग करने में सक्षम नहीं हैं।

इन छोटे किसानों के विकास के लिए सारे देश में कुछ चुने हुए जिलों में 46 लघु कृषक विकास अभिकरण स्थापित किए गए हैं। मध्यप्रदेश में 4 अभिकरण क्रमशः छिन्दवाड़ा, बिलासपुर, उज्जैन एवं रतलाम में स्थापित किए गए हैं। इन अभिकरणों की स्थापना के लिए जिलों का चयन निम्नलिखित आधार पर किया गया है—

1. जिले में छोटे कृषक पर्याप्त मात्रा में हों।
2. जिले में कृषि विकास की पर्याप्त सम्भावनाएं हों, जैसे सिंचाई के लिए पानी की पर्याप्त उपलब्धि।
3. जिले में विस्तृत खेती कार्यक्रम चल रहा हो अथवा चलनेवाला हो।
4. जिले में सुदृढ़ सहकारी साख संगठन मौजूद हो, जो कि सहायता किए जाने पर अभिकरण के साख कार्यक्रम को पूरा कर सके।
5. यद्यपि अभिकरण के लिए पूरा जिला चुना जाता है परन्तु एजेन्सी अपनी व्यावहारिक सुविधानुसार प्रारम्भ में 1-2 ब्लाक से कार्य प्रारम्भ कर सकती है।

अभिकरण के कार्य

पहले कहा जा चुका है कि अभिकरण के कार्य ऐसे कृषकों तक ही सीमित रहेंगे जो उन्नत कृषि पद्धति, सिंचाई, खाद के प्रयोग एवं मशीनों के उपयोग से अपने को परम्परागत कृषक की स्थिति से निकालकर आर्थिक दृष्टि से सक्षम-कृषक की स्थिति में लाने के लिए उत्सुक होंगे। अतः अभिकरण के कार्य इस प्रकार है—

1. सर्वप्रथम अभिकरण का कार्य है छोटे कृषकों का पता लगाना, उत्पादक के रूप में उनकी विशिष्ट समस्याएं जानना, ऐसे साधनों का पता लगाना जिससे वे असमर्थता से मुक्त होकर सक्षम एवं सफल किसान बन सकें। इसके साथ ही साथ उस व्यवस्था का पता लगाना जिससे कृषकों को साधन उपलब्ध हो सकें।

2. अभिकरण का कार्य छोटे किसानों को कृषि सेवा तथा आवश्यक उपकरण तथा साधन उपलब्ध करने में मदद करना है, जिसमें सिंचाई प्रमुख है। किसानों को कुएं खोदने के लिए सहकारी बैंक से ऋण प्राप्त करने में मदद करने के साथ ही साथ अभिकरण कुओं, नल कूपों तथा सामुदायिक कुओं की निर्माण आदि गतिविधियों को प्रोत्साहन देना है। इसके अतिरिक्त, अभिकरण यह भी देखेगा कि किसानों को सहकारी संस्थाओं, शासन अथवा प्राइवेट व्यापारियों से समय पर पर्याप्त मात्रा में उन्नत बीज, खाद तथा आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि होती रहे।

3. छोटे किसानों के लिए अभिकरण कृषि उद्योग निगमों तथा अन्य संस्थाओं के माध्यम से सुधरे यन्त्र, कीटनासक दवाइयों तथा किराए पर ट्रैक्टरों की उपलब्धि आदि की व्यवस्था भी करेगा।

4. अभिकरण छोटे किसानों के लिए उपयोगी विभिन्न उत्पादन एवं विनियोजन योजनाएं बनाएगा तथा उनके क्रियान्वयन का निरीक्षण करेगा।

5. अभिकरण डुग्ध व्यवसाय, कुक्कुट पालन आदि कार्यक्रमों के माध्यम से छोटे किसानों को अतिरिक्त आय कमाने की सम्भावनाओं को मूर्त रूप देने में सहायक होगा।

6. अभिकरण छोटे किसानों को सहकारी संस्थाओं, केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा भूमि विकास बेंक के माध्यम से अल्प, मध्यम एवं दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराने में सहायता करेगा।

छोटे किसानों को ऋण

नई कृषि नीति के अन्तर्गत इस बात पर जोर दिया गया है कि छोटे किसानों की साख प्राप्त करने की योग्यता उसकी भूमि से नहीं बल्कि उन्नत कृषि के प्रति उसके झुकाव से आंकी जानी चाहिए। लघु कृषक विकास अभिकरण ऐसे ही किसानों के लिए कार्यरत एक सहायक एवं मार्गदर्शक संस्था है। परन्तु यहां इस बात को स्पष्टः समझ लेना चाहिए कि यह अभिकरण किसानों को ऋण देने का कार्य स्वयं नहीं करेगा। यह काम सहकारी साख समिति, सहकारी बैंक तथा सहकारी भूमि विकास बैंक को करना होगा। ऐसे ऋणों के जोखिम की अवस्था में अभिकरण जोखिम कोष के निर्माण, तथा ऋण वितरण और उसकी वसूली के लिए आवश्यक तकनीकी एवं निरीक्षण कर्मचारी रखने के लिए अनुदान मुहैया करेगा।

अभिकरण द्वारा 5 वर्ष की अवधि में ऋण देनेवाली संस्थाओं को लगभग 34 लाख रु० प्रति जिले के हिसाब से जोखिम कोष के लिए अनुदान दिया जाएगा। यह आशा की गई है कि 5 वर्ष के कार्यकाल में अभिकरण 50,000 छोटे किसानों की सेवा कर सकेगा। अभिकरण द्वारा सहकारी संस्थाओं को जोखिम कोष के लिए जो अनुदान दिया जाएगा उसमें (1) प्राथमिक कृषि साख समितियों को वास्तविक अतिरिक्त ऋणों का 6 प्रतिशत (2) केन्द्रीय सहकारी बैंक को वास्तविक अतिरिक्त ऋणों का 3 प्रतिशत तथा (3) सहकारी भूमि विकास बैंक को वास्तविक ऋणों का 3 प्रतिशत होगा।

प्रत्येक लघु कृषक विकास अभिकरण पर 5 वर्ष की अवधि में 2 करोड़ रु० का व्यय होगा।

मध्यप्रदेश

मध्यप्रदेश में लघु कृषकों का प्रतिशत 36.6 है। मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा, बिलासपुर, उज्जैन एवं रतलाम जिलों में 4 अभिकरण अगस्त 70 तथा उसके आसपास से प्रारम्भ किए गए हैं तथा उनका 1 वर्ष खत्म होने वाला है।

उज्जैन-रतलाम अभिकरण के द्वारा लघु कृषकों का चयन कर लिया गया है और उन्हें पासबुक दी जा चुकी हैं। जिस कृषक के पास पासबुक रहती है वह अभिकरण द्वारा "छोटा किसान" माना जाता है। रतलाम एवं उज्जैन जिलों में नए कुएं, कुआं सुधार तथा विद्युत एवं तेल चालित पम्पों के लिए अप्रैल 70 से जुलाई 71 तक क्रमशः 15,31,413 एवं 27,09,000 रु० का दीर्घकालीन ऋण सहकारी भूमि विकास बैंकों द्वारा वितरित किया जा चुका है। इन ऋणों से 577 कृषक रतलाम जिले में तथा 852 कृषक उज्जैन जिले में लाभान्वित हुए हैं।

मध्यकालीन ऋण के अन्तर्गत रतलाम एवं उज्जैन जिले में क्रमशः 260

एवं 482 कृषकों को 2,56,279 रु० एवं 5,65,400 रु० का ऋण दिया गया है। अल्पकालीन अवधि के ऋण रतलाम में 8,545 तथा उज्जैन में 11,576 कृषकों को दिए गए हैं जिसकी राशि क्रमशः 22,49,714 एवं 34,50,000 रु० है। इस प्रकार इन दो जिलों में अब तक कुल 22,932 कृषक विभिन्न प्रकार के ऋण प्राप्त कर चुके हैं।

छिन्दवाड़ा लघु कृषक विकास अभिकरण द्वारा 12.50 लाख, 8.03 लाख एवं 6.55 लाख रुपये के अल्पकालीन, मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण छोटे किसानों को दिए जा चुके हैं। बिलासपुर अभिकरण में यह राशि क्रमशः 10.00 लाख 8.56 लाख और 6.62 लाख रु० है।

दुग्ध योजनाएं

किसानों की आय को बढ़ाने के लिए दुग्ध योजनाएं प्रारम्भ की गई हैं जिसके अन्तर्गत स्टेट बैंक आफ इंडिया द्वारा उज्जैन में 19 छोटे किसानों को 27,000 रु० का ऋण दिया गया है। 1971-72 के लिए उज्जैन केन्द्रीय सहकारी बैंक ने कायथा सहकारी दुग्ध योजना के लिए 1 लाख रुपये के ऋण स्वीकृत किए हैं जिनमें 22 छोटे कृषकों को ऋण मिलेगा। रतलाम जिले में 9 दुग्ध सहकारी समितियां गठित की गई हैं जिससे 199 सदस्यों को लाभ होगा। इन समितियों को रतलाम सहकारी बैंक द्वारा 3 लाख रु० का ऋण देने की व्यवस्था है।

सिंचाई योजनाएं

1971-72 में रतलाम जिले में दो सहकारी उद्वहन सिंचाई समितियां गठित की गई हैं जिनसे 185 एकड़ भूमि सिंचित होगी। इन दोनों योजनाओं में 11 छोटे कृषक भी शामिल हैं। उज्जैन जिले में भी एक सिंचाई समिति का गठन किया गया है जिससे 80 एकड़ भूमि में सिंचाई होगी। 1971 की एक अन्य योजना से 300 एकड़ में सिंचाई होने की आशा है।

सामान्य अवलोकन

छोटे किसानों के विकास की यह योजना एक अग्रगामी प्रायोगिक योजना है तथा इसे प्रारम्भ हुए बहुत कम समय हुआ है। अतः ऐसी स्थिति में अधिकारपूर्वक कुछ कह सकना सम्भव नहीं है। फिर भी जो बातें देखने में आई हैं तथा जिनसे कुछ तथ्य निकाले जा सकते हैं, वे इस प्रकार हैं--

1. इस अभिकरण के अन्तर्गत छोटे किसानों को ऋण प्रदान करने की जिम्मेदारी सहकारी संस्थाओं की ही है। अभिकरण जोखिम कोष के लिए अनुदान देगा। यदि अभिकरण क्षेत्र का बैंक आर्थिक दृष्टि से सक्षम नहीं है तो अभिकरण का उद्देश्य पूरा नहीं होगा। पूर्णिया (बहार) के लघु कृषक अभिकरण से सम्बन्धित एक अध्ययन में कहा गया है कि "पूर्णिया" केन्द्रीय सहकारी बैंक समय पर ऋण की वसूली न होने के कारण किसानों की मांग की पूर्ति करने में असमर्थ है।

2. इन अभिकरणों की स्थापना उन जिलों में हुई है जहां सहकारी साख संगठन मजबूत हैं। इससे उन पिछड़े जिलों में जहां सिंचाई आदि के माध्यम से कृषकों की स्थिति को ऊपर उठाना जरूरी है, किसानों को इस योजना का लाभ नहीं मिल पा रहा। उदाहरणार्थ, मध्यप्रदेश के विन्ध्य-सम्भाग के 7 जिलों में से एक जिला भी अभिकरण के लिए नहीं चुना गया।

इसी तरह आदिवासी जिले भी इस योजना के अन्तर्गत नहीं लिए गए। मध्यप्रदेश में आदिवासियों की कुल जनसंख्या 67 लाख है जो कुल जनसंख्या का 20.63 प्रतिशत है। प्रदेश के बस्तर, मण्डला, छिन्दवाड़ा, सरगूजा, रायगढ़, धार, झाबुआ, मुरैना तथा शहडोल जिलों में आदिम जातियां विशेष रूप से पाई जाती हैं। परन्तु 4 अभिकरणों में से केवल एक आदिम जाति जिले छिन्दवाड़ा में स्थापित है।

3. लघु कृषक विकास अभिकरणों की स्थापना ऐसे जिलों में हुई है जो आर्थिक विकास की दृष्टि से सम्पन्न है तथा जहां रोजगार मिलने के अधिक अवसर हैं। उदाहरणार्थ उज्जैन और रतलाम मालवा के सम्पन्न जिले हैं। छिन्दवाड़ा तथा उसके आसपास मैंगनीज तथा कोयले की खानें होने की वजह से रोजगार के अधिक अवसर हैं। बिलासपुर छत्तीसगढ़ का प्रमुख नगर है तथा धान की खेती में काफी आगे है। जिले के आसपास कोरबा रायपुर तथा भिलाई में रोजगार मिलने की अधिक सम्भावनाएं है।

4. छोटे कृषक की पहचान के लिए पर्याप्त आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। विभिन्न एजेंसियों में तालमेल तथा समन्वय का अभाव है। अतः अभिकरण की योजनाओं के कार्यान्वयन में बाधा आ रही है।

देश के 46 विभिन्न जिलों में इन विकास एजेन्सियों द्वारा चतुर्थ योजनाकाल में 20 लाख से अधिक छोटे किसानों को सहायता देकर कृषि अर्थव्यवस्था को एक नया मोड़ देने का प्रयास किया जा रहा है। इस योजना की सफलता पर ही भविष्य में अन्य वर्ग के छोटे किसानों, कारीगरों तथा 'श्रम जीवियों' के विकास की विस्तृत एवं नियमित योजना का निर्माण होगा। अतः समन्वित प्रयासों तथा कठोर परिश्रम से इसे सफल बनाना ही आयोजकों तथा संचालकों का प्रयास होना चाहिए।

लोकतन्त्र में ग्रामदान की भूमिका

चन्द्रपाल सिंह

'भारत गांवों में बसता है' गांधी जी के इस कथन में कोई मतभेद नहीं। अतः यह स्पष्ट है कि ग्रामोन्नति ही भारत की उन्नति है। जब भारत गुलाम था, हम विवश थे। आज स्वतन्त्रता प्राप्त किए लगभग 24 वर्ष हो चले हैं परन्तु गांव की गिरी स्थिति में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं दे रहा। गांधी और विनोबा जी जैसे महान् देश भक्त और विचारकों ने गांव-गांव घूमकर देखा और अनुभव किया कि गांव के लोग नंगे भूखे हैं। वे भारत के श्रीमान् होकर भी गरीबी के कुचक्र में फंसे हैं। उनके स्वास्थ्य में घुन लगा हुआ है। उनके पिंजरवत ढांचे को गरीबी की प्रखरता जलाकर खाक कर रही है। पर वे छाछ पीकर भारत की गौरव वृद्धि में यती की भांति रत हैं। इसीलिए भारत को स्वराज्य मिलते ही गांधीजी और विनोबा जैसे सन्तों एवं समाज सुधारकों ने राष्ट्र निर्माण के लिए बहुत सी योजनाएं बनाई जिसमें भू-दान और ग्रामदान योजनाएं बड़ी उपयोगी एवं सार्थक सिद्ध हो रही हैं।

ग्रामदान की व्याख्या

भारत के समाजिक और धार्मिक जीवन में दान का बड़ा महत्व रहा है। शंकराचार्य ने दान का अर्थ "संविभाग" बताया। संविभाग का अर्थ होता है-सम्यक विभाग। अर्थात-न्याय संगत बंटवारा। यह उसी तरह होता है जिस प्रकार एक संयुक्त परिवार में सदस्यों के अलग होने पर दिया जाता जाता है। कुछ लोग ग्रामदान का अर्थ यह लगाते हैं कि यदि गांव के लोग अपनी भूमि गांव को दान में प्रदान कर दें तो ग्रामदान हो गया। यह ग्रामदान का सही अर्थ नहीं है। इसके अन्तर्गत क्या मजदूर, क्या किसान, क्या जमींदार और क्या उद्योगी सभी को अपना पूर्ण योगदान करना होता है। श्रमिक को अपना श्रम देना होता है। जिसमें श्रम की क्षमता नहीं उन्हें अपने में निहित सद्भाव, प्रेम, सहिष्णुता व सहयोग आदि ही देने पड़ते हैं। यह विचार धर्म प्रसूत है। धर्म व्यक्तिगत न होकर समष्टिगत होता है। वह किसी संकुचित सीमा में नहीं बांधा जा सकता। विश्व में जो भी है व्यक्ति उसे अपने स्वामित्व में नहीं रख सकता क्योंकि इस संसार में व्यक्तिगत कुछ है भी नहीं। सभी कुछ परमेश्वर का है। हवा पानी प्रकाश सभी कुछ भगवान ने पैदा किए हैं। धरती भी उस परमेश्वर की कृति है। फिर उस पर व्यक्ति अपना अधिकार कैसे कर सकता है। मनुष्य धरती को माता कहता है। पुत्र का कर्त्तव्य माता की सेवा करना होता है न कि उस पर स्वामित्व प्राप्त करना। समाज की वस्तु समाज को अर्पित कर देना ही ग्रामदान है। गांव के सब लोग यदि अपनी भूमि अपनी बुद्धि अपना श्रम सहर्ष प्रदान कर दें तो ग्रामदान का सच्चा रूप सामने आ जाता है।

यह ग्रामदानी गांव का स्वरूप एक संयुक्त परिवार का होगा। जो न्याय व्यवस्था एक संयुक्त परिवार के लिए निश्चित होती है वही व्यवस्था सम्पूर्ण गांव पर लागू रहेगी। सम्पूर्ण गांव एक परिवार होगा। इसके अन्तर्गत सभी परिवारों को मिलाकर एक संकल्प करना होगा कि वे अपने परिवार, अपने गांव और गांव के बाहर प्रत्येक व्यक्ति के साथ सच्चाई और प्रेम का व्यवहार करें और उनकी सेवा करने के लिए तत्पर रहें। ग्रामदानी गांव में सुख और दुख का बंटवारा सम्यक् रूप से होगा। किसी एक व्यक्ति का दुख पूरे गांव का दुख होगा। इससे दुख निश्चय ही कम हो जाएंगे। ग्रामवासियों में परस्पर भ्रातृभाव, सद्भावना और एकता होगी जिससे गांव में उल्लास, नया जोश, नव प्रकाश और स्वर्गीय आनन्द का वातावरण बनेगा।

ग्रामदान अभियान

वास्तव में गांधी और विनोबा जी जैसी महान् विभूतियों ने भारत के गांव के निवासियों को अपनी आंखों से देखा। मजदूरों के शोषण और उनके घरों में रात को चूल्हा बुझा देखा तो उनका दिल भर आया और उनकी मुक्ति के लिए मार्ग की खोज करने लगे। उनके मस्तिष्क में यह विचार आया कि यदि बेरोजगार मजदूरों को थोड़ी सी जमीन मिल जाए तो काम चल सकता है। परिस्थितिवश भूदान का विचार ही अधिक उपयुक्त प्रतीत हुआ।

ग्रामदान आन्दोलन कोई प्रथक् अस्तित्व वाला विचार नहीं है। यह तो भूदान रूपी गंगा से निकला पवित्र स्रोत है। 18 अप्रैल 1951 में श्री रामचन्द्ररेड्डी ने 100 एकड़ भूमि का भूदान किया जिसके परिणामस्वरूप दान गंगोत्री का उद्गम हुआ। इसी क्रम में ग्रामदान-आन्दोलन भी प्रारम्भ हो गया। सन् 1957 में एलवाल में प्रमुख संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं नेताओं की एक सभा हुई जिसमें ग्रामदान आन्दोलन का जोरदार समर्थन किया गया।

भारत का पहला ग्रामदानी गांव मगरौठ है। यह इस रूप में भारत में ही नहीं वरन विश्व में भी प्रसिद्ध है। यह वह गांव है जिसने अपना सब कुछ अर्पण कर दिया है। आज देश में ग्रामदानी गांवों की

संख्या लगभग साढ़े तीन हजार से अधिक हो गई है। 22 जून, 1953 को गांधी चौराहे पर प्रातः काल की वेला में 35 परिवारों ने सम्मिलित खेती और रोजगार के निश्चय के साथ अपना विस्तृत परिवार बनाया। उत्तरप्रदेश के काशी जिले में 145 गांवों में ग्रामदान पुष्टि का काम सम्पन्न होकर ग्रामसभाओं की स्थापना हो चुकी है। गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली के मन्त्री श्री राधाकृष्णन ने हाल ही में बताया है कि मुजफ्फरनगर, भागलपुर, मदुरई, तंजौर, धारवाड़, इन्दौर, बीकानेर और आगरा ऐसे जिले हैं जहां ग्रामदान प्राप्ति का कार्य तीव्रगति से चल रहा है। म० प्र० में भी ग्रामदान समितियों का गठन जिला स्तर पर हो चुका है।

ग्रामदान का महत्व

ग्रामदान का प्रमुख आदर्श गांव में गांववालों का उनकी दीन हीन स्थिति से अवगत होकर उनके हाथ पैरों की मेहनत के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण करना है तथा प्रेम और सहकारिता के आधार पर उन्हें समृद्धिशाली बनाना है। यह समृद्धि केवल मात्र देहात में भूमि पर कृषि कार्य करने से ही सम्भव नहीं है वरन हर पहलू में उन्हें स्वावलम्बी बनना है, जैसे गांव में गांव के कच्चे माल का प्रयोग कर आवश्यकताएं पूरी की जा सकें तथा गांव वाले किसी कारण से होने वाले झगड़े का निबटारा स्वयं करें। ग्रामदान से कृषि उत्पादन में वृद्धि होगी तथा सम्मिलित खेती के कारण व्यय भी कम होगा। इस लाभ का प्रत्यक्ष अनुभव हो चुका है। आर्थिक दृष्टि से ग्रामदान बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। अर्थशास्त्रियों ने इस विचार को आधुनिकतम माना है। नैतिक दृष्टि से ग्रामदान समाज सुधार का एक महान अभियान है। ऐसे गांव को व्यापारी और साहूकार लूट नहीं सकते। प्रेम और सहकारिता के कारण सामाजिक विषमता और असमानता दूर होगी और समाज का नैतिक बल ऊंचा होगा। ग्रामदान का विचार धार्मिक होने के साथ-साथ वैज्ञानिक भी है। इसमें निहित विश्वबन्धुत्व की भावना सारे जग को निकट खींच लाती है।

राजनीति के क्षेत्र में ग्रामदान एक महान उपलब्धि है। गांधीजी के ग्रामीण स्वराज्य का स्वरूप ग्रामदानी गांव में ही देखने को मिल सकता है। ग्राम स्वयं एक इकाई होता है। गांव एक राज्य, होता है। "गांव की खेती, गांव का राज्य गांव-गांव में हो स्वराज्य"—की परिकल्पना ही ग्रामदानी गांव में प्रत्यक्ष होती है। गांव के झगड़ों का फैसला जब गांव अपने आप कर लेता है तो वह ग्राम राज्य होता है और जब गांव में झगड़ा होता ही नहीं तो वहां "राम राज्य" होता है।

ग्रामदान से गांव वालों में उत्साह की लहर आई। बिनोबा और जयप्रकाश-नरायण जैसे सन्त पैदल यात्रा करते हुए ग्रामदान के विचारक रहे हैं और इस अभियान में प्राण फूंकते हुए देश के गौरव में चार चान्द लगाने में जुटे हैं। कस्तूरबा स्मारक निधि, गांधी स्मारक निधि और सर्वोदय मण्डल व समाज कल्याण बोर्ड आदि संस्थाएं इस पुनीत कार्य में भरसक योगदान दे रही हैं। सन्त बिनोवा जी का यह नारा 'सम्पति सब रघुपति के आही' निश्चय ही भारत के गांवों में राम राज्य स्थापना की प्रेरणा प्रदान कर रहा है और ग्रामदान की मनोवृत्ति लोगों में उत्तरोत्तर बढ़ रही है। ईश्वर ग्रामदान अभियान को वर दे ताकि बापू के सपनों के भारत का निर्माण हो सके।

●

धरा का अभिषेक

डा० छैलविहारी गुप्त

आज श्रम सीकर धरा का कर रहे अभिषेक,
चल पड़े हम खेत को ले हल
भर चरण में गति, भुजा में बल
कांप उठता व्योम जब उठती मनुज हुंकार,
उठ चुका है अब बहुत ऊंचा हमारा देश
अब न छलकेगा नयन में जल
काम करने का समय केवल
हर कदम के साथ उठती गीत की झंकार,
बढ़ चला चलती मशीनों का प्रलय आवेश
ढल रहे इस्पात की हलचल
छा गए उल्लास के बादल
स्वर्णादानों का लगा खलिहान में अम्बार,
और धरती का बदलता जा रहा परिवेश
आज श्रम सीकर धरा का कर रहे अभिषेक

महाराष्ट्र में कृषि उद्योग के क्षेत्र में सहकारी प्रयास

अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

आर्थिक विकास का फल सब वर्गों को समान रूप से मिले यह केवल सहकारिता से ही सम्भव है। सहकारी संस्थाएं एकमात्र बैंकिंग या महाजनी का ही काम करने के उपयुक्त नहीं बल्कि ये कृषि उद्योग के क्षेत्र में प्रवेश कर एक नूतन जनक्रान्ति को जन्म दे सकती हैं और समानता और बन्धुता के आधार पर नवीन सामाजिक व्यवस्था की स्थापना कर सकती हैं। इस व्यवस्था में न कोई मालिक और न कोई मजदूर होंगे। किसी प्रकार का वर्णभेद न होगा। यह समाज ज्ञान और कर्म के आधार पर सदा बनते बिगड़ते वर्ग के आधार पर खड़ा होगा। सहकारी संस्था के चलाए कृषि उद्योग विकास कार्यों के केन्द्र होंगे। ये साहित्य-कला और संस्कृति के नए केन्द्र होंगे। ये नई सांस्कृतिक क्रान्ति को जन्म देंगे। खेतों में खड़ी फसल के साथ साथ संगीत नृत्य का मधुर रव उठेगा और भारतीय गगन में व्याप्त हो जाएगा।

1950 में सहकारी संस्था ने महाराष्ट्र में स्व० श्री धनंजय राव गाडगिल के नेतृत्व में कृषि उद्योग के क्षेत्र में प्रवेश किया। इस घटना को बीस साल बीत गए। यह परीक्षा अवस्था को पारकर गया है। यही कारण है कि यह मान लिया गया है कि विधायन उद्योग एकमात्र सहकारी क्षेत्र में ही खोले जाएं और चलाए जाएं। जो निजी क्षेत्र में हैं उनको और धीरे धीरे सहकारी क्षेत्र को मान्यता देना इस बात का प्रमाण है कि कृषि की पैदावार के आधार पर चलने वाले उद्योगों को सहकारी संस्थाएं सफलतापूर्वक चला सकती हैं।

हां, एक बात है। ये केवल नाम की सहकारी संस्था न होनी चाहिए। यह केवल सरकारी अनुदान और सहायता लेने वाली न होनी चाहिए। सच्ची और यथार्थ अर्थों में सहकारी कृषि उद्योग संस्था वही हो सकती है जिसमें फसल उत्पादक, उपभोक्ता और श्रम ये तीनों समान रूप से शामिल हों और तीनों मिलकर एक लक्ष्य से काम करें।

सहकारिता के इस मुख्य सिद्धान्त को मानते हुए और इसके अनुसार काम करते हुए चीनी का पहला कारखाना प्रवरनगर में खोला गया। इसे महर्षि स्व० श्री गाडगिल का पथ प्रदर्शन और नेतृत्व प्रारम्भ से प्राप्त था। अतः सब काम वैज्ञानिक रीति से एवं पद्धतिपूर्ण तरीके से किए गए।

प्रवरनगर के कारखाने ने सहकारी चीनी कारखाने की सुनिश्चितता का विश्वास सरकार को करा दिया। 1961 में श्री गाडगिल की अध्यक्षता में महाराष्ट्र सरकार ने 'कोआरेटिव इण्डस्ट्रियल कमीशन' की स्थापना की। सहकारी उद्योग वैज्ञानिक आधार पर स्थापित करना इसका उद्देश्य था। इस कमीशन की एक विशेषता है। यह कारखानों को तकनीकी विशेषज्ञों का परामर्श देता है। यही नहीं साज सामान चुनने, तकनीकी कर्मचारी वर्ग नियुक्त करने, मशीन कहां से मिल सकती है, इत्यादि सब कामों में सहायता और सलाह मशविरा देता है। सहकारी चीनी उद्योग की स्थापना सहकारिता के सिद्धान्तों को ठीक रीति से पालने के आधार पर की गई थी। अतः सहकारी चीनी कारखाने सफल हुए और निजी क्षेत्र के लिए भी ईर्ष्या के केन्द्र हुए।

महाराष्ट्र में इस समय 30 सहकारी चीनी फैक्ट्रियां हैं। इन सबका संगठन उत्पादक सहकारी समिति के रूप में हुआ है। इनकी कार्यकारी पूंजी 160 करोड़ रु० से अधिक है। भारत भर में उत्पन्न कुल चीनी का यह एक तिहाई उत्पन्न करते हैं। इनकी कार्यक्षमता एवं कार्य-कुशलता का स्तर निजी अंचल से ऊंचा हैं। सहकारी फैक्ट्री का कार्यक्षेत्र 15 से 20 मील घेराई भीतर रहता है। अधिकांश किसान छोटे हैं। इनकी जोतें दो-तीन एकड़ (5 बीघा से साढ़े सात बीघा) की हैं। सहकारी चीनी फैक्टरी दुर्बल किसानों की मददगार और सहायक है। चीनी तैयार हो जाने पर किसान को औसतन कीमत दी जाती है। किसान खेत में सर्वोत्तम जाति का गन्ना बोए इसका ख्याल रखा जाता है। फैक्टरी कृषि विभाग को इसके लिए बराबर ताकीद करती रहती है। विशेषज्ञों कीं सलाह भी गन्ना उत्पादकों को सदा सुलभ रहती है।

इसका ही यह फल है कि महाराष्ट्र में प्रति एकड़ 60 टन गन्ना उत्पन्न होता है। देश का औसतन उत्पादन प्रति एकड़ 15 टन गन्ना है। फैक्टरी गन्ना-कटाई और उसके परिवहन का भी ख्याल रखती है। सरकारी फैक्टरियां किसानों को माल के दाम के अतिरिक्त विभिन्न सुविधाएं किसान को देती हैं, जैसे किसान कटा गन्ना फैक्टरी को सीधा भेज देता है। बैलगाड़ी मिलने की प्रतीक्षा नहीं करता। कटे गन्ने को खेत में जमा कर उसकी सुरक्षा की चिन्ता से मुक्त हो जाता है, परेशानी से बच जाता है। माल के चोरी जाने का भय नहीं रहता। किसान आज अपने गन्ने के बदले में जो कुछ पाता है वह उससे दुगुना है जो वह सहकारी फैक्टरी न लगने से पहले पाता था। सह-

कारी चीनी की फैक्टरियों को कोई रियायत या कोई विशेष सुविधा प्राप्त नहीं है। इनकी स्थापना शेष अन्य यूनिटों के समान हुई है। शेयर पूंजी किसान के पास विद्यमान जोत के एकड़ों के रूप में है। सदस्यों ने लगभग 65 लाख रु० संग्रह किया है। सरकार ने 25 लाख रुपया दिया है। इण्डस्ट्रियल फाइनेन्स कारपोरेशन ने लगभग एक करोड़ रुपया दिया है। इण्डस्ट्रियल फाइनेन्स का पोरेशन मध्यम ब्याज दर पर कर्ज देता है। शीर्ष सहकारी बैंक शेयर पूंजी के संग्रह में मदद देते हैं। 20 प्रतिशत सदस्य देता है। शेष रकम सहकारी समिति को शेयर खरीदने के लिए मध्यम रेट पर बैंक देता है। विधायन सोसाइटी का सदस्य इस प्रकार अपने लिए शेयरों को सारा धन आसानी से दे देता है।

सहकारी चीनी फैक्टरियों के ऋण मोचन की प्रगति सन्तोषजनक है। प्रवरनगर की पहली चीनी फैक्टरी और इसके साथ स्थापित चीनी फैक्टरियों ने न केवल इण्डस्ट्रियल कारपोरेशन से लिया उसका सारा कर्ज उसको फेर दिया है, बल्कि सरकार का अंशदान भी वापिस कर दिया है। यह इस बात का प्रबल प्रमाण है कि आर्थिक दृष्टि से सहकारी फैक्टरियां लाभजनक हैं और आत्मनिर्भर हो सकती हैं।

सहकारी फैक्टरी स्वत: अपने आप में सामुदायिक विकास का एक केन्द्र है। इन्होंने सड़कें बनाई हैं। इन्होंने स्कूल स्थाप्ति किए हैं। वर्कशाप चलाए हैं। अस्पताल खोले हैं। ये फैक्टरियां अन्य क्रियाकलापों को भी प्रोत्साहन देती है।

महाराष्ट्र में गन्ने के बाद कृषि की मुख्य फसलें हैं कपास, धान और मूंगफली। सहकारी क्षेत्र में धुनने और बिनौला निकालने की कुछ सहकारी समितियां स्थापित हुई थीं। परन्तु इनका किसानों के साथ कोई सम्बन्ध न था। कपास उत्पादक और फैक्टरी के बीच किसी प्रकार का लिंक न था। अब प्रक्रिया बदली है। कताई की सहकारी क्षेत्र में स्थापित स्पिनिंग मिलें कपास उत्पादकों और उपभोक्ताओं (खड़ियों के मालिकों) की हैं। इस किस्म की पहली मिल चलकरंजी में लगी है। यह अन्यों के वास्ते प्रेरणा स्रोत सिद्ध हो रही है। सहकारी क्षेत्र में 18 स्पिनिंग मिलें हैं। इन मिलों के तकुओं की संख्या 32 लाख है। यवतमाल (विदर्भ) में बैंक ने "काटन सीड ग्राफ प्रोजेक्ट" (कपास से बिनौले निकालने की परियोजना) को सहायता दी है।

मूंगफली से तेल निकालने के विधायन की दो परियोजनाएं चल रही हैं। एक सांगली में और दूसरी लातूर में। सांगली में 20 तेल मिलें हैं। ये जिले भर में फैली हुई हैं। सांगली में लगाया नया प्लाण्ट 50 टन पी. डी. का है। लातूर का प्लाण्ट कमप्लेक्स है। तेल से लेकर साबुन बनाने और वनस्पति तैयार करने की सारी प्रक्रिया यहां एक साथ चलती है। साबुन, वनस्पति आदि के दाम जल्दी जल्दी बदलते रहते हैं। अत: राज्य सरकार से मिलकर "प्राईस फ्लक्चुएशन फण्ड" (मूल्य घट बढ़ निधि) की स्थापना की है। इसके कारण भावों में हुई घट बढ़ का प्रभाव लातूर की मिल पर न पड़ेगा।

महाराष्ट्र में सहकारिता क्षेत्र में 102 राइस मिलें हैं। इनकी सदस्य संख्या 30,000 है। ये 67,000 टन चावल तैयार करती हैं। धान संग्रह में सरकारी एकाधिकार है। अत: सहकारी राइस मिलों को भारी प्रोत्साहन मिला है। इसके कारण सहकारी समिति को भण्डारा, चांदा और कोलाबा में धान के छिलके से तेल निकालने की परियोजना तैयार करने का साहस हुआ है। इस उद्योग की स्थापना में एक भारी कठिनाई है। मिल को प्रतिदिन ताजा 20 टन तूष (धान का छिलका) चाहिए। पालिश ने 4 प्रतिशत घटा दिया है। ताजे तूष की उपलब्धि कैसे हो सकती है, इसका पता लगाया जा रहा है। तूष सहकारी मिलों से प्राप्त हो सकेगा। तूष-तेल मिल संघातमक होगा क्योंकि इसकी स्थापना सहकारी राइस मिलें मिलकर करेंगी। इस परियोजना के चालू होने पर धान उत्पादक की आय डेढ़ गुना बढ़ जाएगी। सहकारी क्षेत्र में उपक्रम, साहस और कल्पना का उदय और विकास सम्भव है, यह इससे प्रकट है।

खेत की पैदावार के आधार पर (विधायन) उद्योगों की स्थापना में सहकारी क्षेत्र और सहकारी समितियों के लिए यह भी आवश्यक कर दिया है कि वह खेत की पैदावार बढ़ाने पर भी ध्यान दें। क्योंकि मिल या फैक्टरी का जीवन और कार्य खेतों की पैदावार पर निर्भर है। इनकी पैदावार बढ़ेगी तो उसका कार्य बढ़ेगा और जितना अधिक मात्रा में उत्पादन होगा उसी अनुपात में उत्पादन व्यय कम होगा। अत: खेत की पैदावार निरन्तर क्रमिक रूप से बढ़ती रहे इस ओर ध्यान देना सहकारी मिलों और फैक्टरियों के लिए आवश्यक हो गया है। "अधिक अन्न उपजाओ" का नारा लगाना इनके लिए जरूरी हो गया है।

खेत की पैदावार बढ़ाने के लिए खेती के उपकरणों पर विचार करना, उनमें सुधार करना और उनको अधिकाधिक उपयोगी बनाना जरूरी हो गया है, क्योंकि खेत की पैदावार मुख्यत: पुष्ट बीज, पानी और खाद पर निर्भर है। बीज का इन्तजाम तो कृषि विभाग करता है। पानी की व्यवस्था सिंचाई विभाग करता है। अत: खाद की कमी की पूर्ति का काम सहकारी मिलों को करना होगा। खेती के उपकरणों में हल, पम्पिंग सैट (पानी देने के लिए), डिजल एंजिन, एलैक्ट्रिक मोटर मुख्य हैं।

खाद की बात निकलते ही आजकल सबका ध्यान फर्टिलाइजर (रासायनिक खाद) की ओर जाता है। मेंगनी, गोबर और कम्पोस्ट को आज कौन पूछता है? फिर इसके लिए व्यापक और दृढ़ संगठन चाहिए। अत: ये दोनों खाद सहकारी क्षेत्र से भी उपेक्षित हैं। यह एक आश्चर्य की बात है। पर यह सत्य है। राज्य कृषि मन्त्री श्री शिन्दे ने एक बार कहा था पशुपालन की कोई सहकारी समिति महाराष्ट्र में सफल नहीं हुई। पशुपालन को खेती से अलग कर देने का यह परिणाम है। गोबर, मेंगनी और कम्पोस्ट की खाद की

उपयोगिता और पैदावार बढ़ाने की क्षमता से कोई इनकार नहीं करता। ये खादें सस्ती होंगी। इससे अन्न धान्य का भाव घटना सम्भव होगा। खाद्य पदार्थों की मंहगाई इसके बिना दूर होनी सम्भव नहीं। उत्पादन व्यय घटाने की ओर सहकारी समितियों को ध्यान देना चाहिए। यहां निजी क्षेत्र कभी प्रवेश न करेगा। अतः इस क्षेत्र में सहकारी समितियों का एकाधिकार रहेगा।

महाराष्ट्र इण्डस्ट्रियल कमीशन ने सहकारी क्षेत्र में 60,000 टन प्रतिवर्ष दानेदार फर्टिलाइजर तैयार करने की परियोजना तैयार की है। पांच कारखाने लगने वाले हैं। डीजल एंजिन, पम्पिंग सैट और इलैक्ट्रिक मोटर आदि बनाने के लिए कमप्लैक्स तैयार होने वाला है। कोल्हापुर के वर्कशापों के मालिकों और सहकारी समितियों ने "महाराष्ट्र कोआपरेटिव इंजीनियरिंग सोसाइटी" की स्थापना की है। इसकी मूल पूंजी 50 लाख रुपया है। यह सोसाइटी जापान के सहयोग से बहु-उपयोगी "पावर टिलर" (विद्युत चालित हल) बनाने की बात सोच रही है। यह होने पर सहकारिता का क्षेत्र कितना विस्तृत और व्यापक हो जाएगा इसकी सहज में कल्पना की जा सकती है। फिर किसान केवल भूमिहीन हलवाहा या कृषि-मजदूर ही न रहेगा। वह भी उद्योगपति वर्ग में सम्मिलित हो जाएगा।

सहकारी क्षेत्र की ही एक अन्य योजना है अमोनियम क्लोराइड और सोडा एश का उत्पादन करना। यह परियोजना 19 करोड़ रुपए की है और प्रतिदिन यह प्लाण्ट 200 टन अमोनियम क्लोराइड और सोडा एश दोहरी प्रक्रिया से तैयार करेगा।

कृषि पैदावार के आधार पर ही सहकारी समितियां औद्योगिक विकास के क्षेत्र में कार्य करेंगी। इनका ध्यान कृषि पैदावार के बाई प्रोडक्ट्स के आधार पर भी उद्योग चलाने की ओर है। जैसे गन्ने की खोई या छिलके से कागज बनाना, मोलैसेस (शीरा) से अल्कोहल व शराब बनाना, साबुन बनाना आदि। मोलैसेस (शीरा) पेट रोगों की दिव्य औषधि है। यह गांवों के लोग बरतते हैं। सहकारी समितियां शीरे का रोग निवारक औषधि के रूप में उत्पादन करेंगे तो भारत की गरीब जनता, डाक्टरों के पाश से मुक्त हो जाएगी, क्योंकि अधिकांश रोगों का मूल कारण उदर विकार है। शीरा का सेवन इसको दूर करता है। यह जर्मन डाक्टरों द्वारा परीक्षित बात है। आवश्यकता है कि शीरा दवाई के रूप में उपलब्ध हो और दफ्तर जाने को तैयार बाबू शीशी से दवा पी ले। उसको गरम पानी में शीरे को मिलाने घोलने की मुसीबत में न पड़ना पड़े। शीरे की उपयोगिता की परीक्षा इस दृष्टि से की जानी चाहिए। यह करके सहकारी समितियां सस्ती दवाइयां तैयार करने के क्षेत्र में प्रवेश करेंगी।

स्पष्ट है कि सहकारिता भारत के गांवों को समृद्ध, सम्पन्न और स्वावलम्बी बनाने की क्षमता रखती है। आवश्यकता है निष्ठा, विश्वास और जनसेवा की भावना एवं कर्त्तव्यपालन की प्रवृत्ति की। जन समाज में इसको उत्पन्न करने पर सहकारिता का क्षेत्र उत्तरोत्तर विकसित होता जाएगा। हालैण्ड में सहकारिता का प्रारम्भ डबलरोटी बनाने से हुआ। भारत में इसका प्रारम्भ प्रवरनगर में चीनी की फैक्टरी लगाने से हुआ। बीस साल में वह वट वृक्ष का रूप धारण करने लगा है। इसकी छाया महाराष्ट्र से आगे फैलेगी और भारत के पांच लाख गांव इसकी छाया में सम्पन्न और सुखी जीवन व्यतीत करेंगे। क्या यह आशा और विश्वास ही सहकारी समितियों को प्राणवान बनाने तथा प्रेरणा देने के लिए पर्याप्त नहीं?

प्रकाशन विभाग

नए प्रकाशन

(जुलाई—अगस्त—सितम्बर 1971)

भारत की लोक कथाएं (चौथा संस्करण)	2.00
काकेशस का कैदी	3.20
कदम मिला के चल (लेखक : हरिचरण सिंह परवाना)	1.00
स्वराज्य के मंत्रदाता तिलक (लेखक : विष्णुचन्द्र शर्मा)	1.30
ज्ञान सरोवर भाग-1 (तीसरा संस्करण)	5.50
हमारे देश के राज्य : हिमाचल प्रदेश (लेखक : एच०सी० सारस्वत)	1.50
भारत का संविधान (चतुर्थ परिवर्द्धित संस्करण)	1.50
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (खण्ड 39)	7.50
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (खण्ड-1) (द्वितीय संशोधित संस्करण)	7.50

डाक खर्च मुफ्त। तीन रु० से अधिक मूल्य की पुस्तकें वी०पी०पी० से भेजी जा सकती हैं।

निदेशक
प्रकाशन विभाग

नई दिल्ली : पटियाला हाउस
कलकत्ता : आकाशवाणी भवन
बम्बई : बोटावाला चैम्बर्स, सर फिरोजशाह मेहता रोड
मद्रास : शास्त्री भवन, 35, हैडोस रोड।

सहकारिता के बढ़ते चरण

श्रीपाल सांगवान

सन् 1948। आजादी की प्रथम वर्षगांठ। इसी दिन से इस चर्चित ग्राम कासिमपुर खेड़ी ग्राम के उत्थान की कहानी आरम्भ होती है। यह उस समय के दिन हैं जब देश में एकाएक पक्के माल का अभाव आ गया था। चीनी, मिट्टी का तेल, मिल का कपड़ा तथा दैनिक जीवन में उपयोग की अन्य आवश्यक वस्तुओं के अभाव से ग्रामीण समाज ग्रस्त था।

जिला मेरठ के बड़ौत ब्लाक स्थित कासिमपुर खेड़ी ग्राम के कुछ उत्साही युवकों ने इस अभाव से निपटने के लिए एक छोटी सी सहकारी समिति का गठन किया था। 200 व्यक्तियों की इस समिति ने 4 हजार रुपया शेयर से इकट्ठा कर अपने ग्राम में 'राशन' की दुकान खोली। उचित मूल्य पर दैनिक जीवन में उपयोगी वस्तुएं ग्रामवासियों को सुलभ होने लगीं। इस समिति के सेवाभाव से निवासियों में सहकारिता के प्रति विश्वास बना। लाभ का रुपया क्षेत्र संघ में जमा हुआ और सुखी जीवन के लिए योजना तैयार होने लगी।

सन् 1958। इस सहकारी समिति की दसवीं वर्षगांठ। आज इस समिति ने कृषि की उपज बढ़ाने के लिए रासायनिक खादों तथा उन्नत बीजों की शाखा स्थापित की। उचित मूल्य पर खाद तथा 'सवाई' पर बीज का वितरण किया जाने लगा। तब इसकी सदस्य संख्या 40 थी।

सन् 1960 से 1970 तक इस समिति ने किसानों को 40 हजार रुपया कर्ज में वितरित किया। इस ग्राम का यह एक रजिस्टर्ड बैंक है। आडिट रजिस्ट्रार के अनुसार यह समिति उत्तर प्रदेश में 'अ' श्रेणी में है। कहते हैं कि उत्तर प्रदेश में इस प्रकार की केवल चार उन्नतशील समितियां हैं।

कहावत है कि परमेश्वर उनकी ही सहायता करता है जो स्वयं प्रयत्नशील रहते हैं। सहकारिता के आधार पर इस ग्राम के लोगों ने जो प्रगति की है, उससे आप देखेंगे कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद किस प्रकार यहां के ग्रामवासियों ने अपने स्वतन्त्र धन्धे को कितना ऊंचा उठाया है। आज 60 घरवाले कासिमपुर खेड़ी ग्राम में हर मकान आधुनिक ढंग का पक्का है। 85 प्रतिशत घरों में बिजली है। हर किसान के पास घरेलू सस्ती बिजली के चारा काटने के उपकरण हैं। नई आयु का प्रत्येक लड़का व लड़की हाई स्कूल पास है। आठ युवक विदेशों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भारत का यह वह क्षेत्र है जहां भूमि का क्षेत्रफल सबसे कम है अर्थात् यहां उपजाऊ भूमि पर जनसंख्या का बोझ सबसे अधिक है। इस क्षेत्र में अधिकांश कृषि व सामाजिक कार्य "डंगवारा" प्रणाली से किया जाता हैं। सन् 1955 में "अधिक अन्न उपजाओ" अभियान के अन्तर्गत यहां 55 रहट से चलनेवाले कुएं केवल 1 मास में ही लगाए गए थे। सहकारी समिति द्वारा सन् 1960 से सन् 1968 तक 4 ट्रैक्टर, 12 पम्पिंग सैट तथा 14 बिजली से चलने वाले ट्यूबवैल लगाए गए।

"साधन सहकारी समिति लिमिटेड" कासिमपुर खेड़ी के कृषक बैंक ने ग्रामवासियों के रहन-सहन, शिक्षा तथा कृषि को उन्नत बनाया है। योग्य छात्रों के अभिभावकों ने 3 प्रतिशत वार्षिक ब्याज दर से 145 युवकों को उच्च शिक्षा प्राप्त कराने में सहायता पाई है।

ग्रामविकास के अन्तर्गत ग्राम की प्रत्येक गली में खड़ञ्जे, स्ट्रीट लाइट, पक्का तालाब, बीज व खाद गोदाम, पंचायत घर तथा 212 सामूहिक पानी पीने के नल हैं। लड़के व लड़कियों की 2 बेसिक पाठशालाएं तथा 1 इन्टर कालिज है।

इस ग्राम के लोगों ने सहकारी भावना से प्रेरित होकर ग्रामविकास की अनेक योजनाएं तैयार की हैं। "ग्राम बैंक" संचालन की योजना तथा प्रबन्ध अपना विशेष महत्व रखता है। हर मास के अन्तिम रविवार को इस "बैंक" के सदस्यों की सभा होती है जिसमें लेखे-जोखें के अतिरिक्त कर्जा प्राप्त करने वालों के प्रार्थना पत्रों पर विचार किया जाता है। उनकी आवश्यकता पर विचार कर "सत्यता" की जांच की जाती है। क्योंकि हर कार्य के लिए ब्याज दर अलग है। जैसे भैंस खरीदने के लिए ब्याज दर 7 प्रतिशत है, बैल के लिए 5 प्रतिशत, शिक्षा के लिए केवल 3 प्रतिशत तथा अन्य कृषि कार्य के लिए 4 प्रतिशत ब्याज दर है। हां विवाह शादियों के लिए कोई भी कर्ज नहीं दिया जाता जबकि चिकित्सा के लिए कोई ब्याज नहीं लिया जाता बल्कि किसी सदस्य की जमानत ही काफी है। हां, भूमिहीन परिवारों से शिक्षा, आवास प्रबन्ध तथा घरेलू उद्योगों के लिए ब्याज दर केवल 2 प्रतिशत ही है। इसके प्रबन्धक ने भेंट के दौरान मुझे बताया कि अगले कुछ वर्षों में यह समिति निराश्रित परिवारों की सहायता करने में भी सहयोग दे सकेगी। यदि कोई कर्ज लेकर घोषितकार्य में व्यय न करे तो तीन मास के अन्दर अन्दर कर्ज अदा करने के लिए बाध्य किया जाता है तथा ब्याज दर 8 प्रतिशत कर दी जाती है।

यही कहानी थी कासिमपुर खेड़ी ग्राम के सहकारी बैंक की जो निरन्तर आगे बढ़ रहा है। जो प्रेरणा का स्रोत है उनके लिए जो समझते हैं कि सहकारिता में मनुष्य अपने कर्त्तव्य से बहक जाता है।

हरित क्रान्ति का दूत बौना गेहूं

कृष्णकुमार

अधिक उपज देने वाली गेहूं की बौनी मैक्सिकन किस्मों को न केवल तिलिस्मी, आदि आश्चर्यजनक नामों से पुकारा गया है, बल्कि हरित क्रान्ति का जनक भी कहा गया है। इस गेहूं को अपने जन्म स्थान मैक्सिको के नाम पर मैक्सिकन गेहूं कहा जाता है। इसके विकास से वहां वर्षों से चली आ रही गेहूं की कमी दूर हो गई, आत्म-निर्भरता आई और देश गेहूं का निर्यात करने लगा। लगभग यही कहानी इस गेहूं की खेती करने वाले 30 अन्य आसपास के देशों की है। भारत में इसी गेहूं की बड़े पैमाने पर खेती के कारण चौथी पंचवर्षीय योजना का 2.8 करोड़ मीट्रिक टन गेहूं के उत्पादन का लक्ष्य 1973-74 से पहले प्राप्त कर लिया जाएगा। भारत, पाकिस्तान, पश्चिम एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिकी देशों के ढाई करोड़ एकड़ क्षेत्र में बौने गेहूं की खेती की जाती है, जिससे 50 करोड़ से अधिक लोगों को भरपूर भोजन मिलना सम्भव हुआ है। गेहूं की उपज में इस आश्चर्यजनक, कहीं कहीं चौगुनी बढ़वार को ही कृषि क्रन्ति की संज्ञा दी गई है। कम से कम यह तो मानना ही पड़ेगा कि गेहूं की उपज में आशा से अधिक बढ़वार से ही कृषि क्रान्ति का सपना शुरू हुआ है।

बौने गेहूं के विकास की कहानी 1946 से शुरू होती है जब यह भ्रान्ति टूटी कि पौधों को धरती से भोजन लेने और अच्छी प्रकार फलने के लिए लम्बा होना आवश्यक है। उत्तर जापान की मोरीओका अनुसन्धान प्रयोगशाला में कार्य कर रहे अमेरिकी कृषि सलाहकार श्री सी० एस० सालमन ने विचित्र किस्म के गेहूं के पोधे देखे जो छोटे थे—मुश्किल से घुटनों तक ऊंचे, पर मजबूत थे। श्री सालमन ने पौधों के बीज अमेरिका की एक नर्सरी को भेज दिए।

दो वर्ष बाद वाशिंगटन राज्य विश्वविद्यालय के गेहूं वैज्ञानिक डाक्टर ओरविल ए० वोगेल ने यह नर्सरी देखी तो उन्हें लगा कि यही वह किस्म है जिसकी खोज वह 1931 से कर रहे थे। नोरीन-10 नामक यह किस्म विश्व की पहली अर्ध-बौने गेहूं की किस्म थी।

श्री वोगेल नोरीन-10 के कुछ बीज अपने साथ लेते आए और उन्हें बो दिया। जब पौधे पके तब सबके सब एक सार थे। उन्होंने इसका ब्रेवर किस्म के साथ संकरण कराया। ब्रेवर किस्म के पौधे अधिक उर्वरकों के प्रयोग से गिर जाते थे, पर 'ब्रेवर और नौरीन-10' की संकरित किस्म गिरी नहीं, क्योंकि उसके पौधे छोटे थे और पत्तियां मुलायम नहीं थीं। 'ब्रेवर सकंरित किस्म' का बीज राकफेलर फाउण्डेशन ने कई देशों को परीक्षण के लिए भेजा जब 'ब्रेवर नोवीन' संकर का 'बर्ट' गेहूं से द्विसंकरण कराया गया तो एक किसान प्रति एकड़ 216 बुशल गेहूं की उपज लेने में सफल रहा।

'ब्रेवर नोवीन' सकंर के कुछ बीज मैक्सिको भी पहुंचे जहां बौने गेहुंओं के पिता डाक्टर नार्मन बोरलोग अपने सहायक कृषि वैज्ञानिकों के साथ अनुसन्धान कार्यों में संलग्न थे। 1954 में उनका 'ब्रेवर नोरीन' संकर में बौनेपन का समावेश करने का प्रयास असफल रहा, क्योंकि नए संकर पर स्मट, तनासड़न आदि जैसे रोगों का भयंकर प्रकोप हो गया जिससे पौधे बांझ रह गए। 1955 में किया गया इस दिशा मे दूसरा प्रयास सफल रहा। 1961 तक कई बौनी किस्में तैयार हो गई थी जिन्होंने मैक्सिको में खूब उपज दी।

राष्ट्रसंघ के खाद्य व कृषि संगठन के तत्वावधान में डाक्टर बोरलोग ने उत्तरी अफ्रीका व मध्य पूर्व के कुछ देशों की

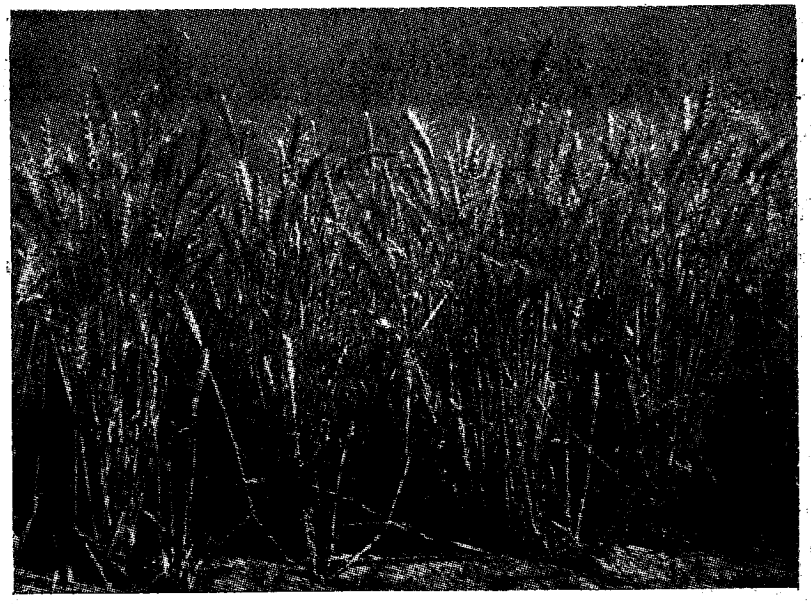

यात्रा की जहां उन्हें इन्सानी भूख, कुपोषणता आदि ज्वलन्त समस्याओं के दर्शन हुए। कुछ देशों में कृषि वैज्ञानिकों और संस्थाओं का नामोनिशान न था। कुछ अन्य में कुछ गिने चुने वैज्ञानिक सफेद कोट पहने प्रयोगशालाओं या परीक्षण प्लाटों पर कार्य करते। डाक्टर बोरलोग को इस पर आश्चर्य भी हुआ और उन्हें इन तथाकथित वैज्ञानिकों पर तरस भी आया। "अरे। प्रयोगशाला स्टेशनों पर तो कुछ भी उग सकता है" डाक्टर बोरलोग ने उन्हें झिड़की दी। "आपको साल-दर-साल अपनी उर्वरता खोती, क्षय होती उन किसानों की धरती की समस्या का हल ढूंढना है जहां से सबके खाने के लिए खाद्यान्न आएगा।

यात्रा के बाद डाक्टर बोरलोग ने खाद्य व कृषि संगठन को सलाह दी कि गेहूं के विकास का प्रशिक्षण देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम चलाया जाए। राकफेलर फाउण्डेशन उसका सारा खर्च वहन करने को तैयार हो गया। 1961 में भारत व अन्य देशों के छः कृषि वैज्ञानिक मैक्सिको पहुंचे। डाक्टर बोरलोग की तरह उन्होंने भी खेतों पर कार्य किया। नौ महीने के कड़े प्रशिक्षण के बाद बौने गेहूं के बीजों के साथ वे अपने देशों में पहुंचे।

1963 में डाक्टर बोरलोग भारत आए। उनकी यात्रा के बाद लरमारोजो और सोनारा-64' किस्मों पर कार्य शुरू हुआ। दोनों देसी लम्बी किस्मों की तुलना में 10 से 20 प्रतिशत अधिक उपज देती थी। 'सोनारा-64' को बीमारियों के प्रकोप की सम्भावना के कारण बुवाई के लिए जारी नहीं किया गया। इसके विपरीत लरमारोजो में बीमारियां नहीं लगती थीं, उसमें कुल्ले खूब फूटते थे, इसलिए पहले इसी को जारी किया गया।

1965 में 300 और 1766 में 18,000 टन बौने गेहूं का बीज मैक्सिको से मंगाकर किसानों को बुवाई के लिए दिया गया। देश भर में बड़े पैमानों पर गेहूं की खेती और उसके प्रदर्शनों का दौर चल पड़ा। जल्दी ही रोग रोधी गुणों के कारण एक नई किस्म पी-वी-18 जारी की गई जिसे देश भर में बोया जा सकता था।

तीनों किस्मों में एक बड़ी कमी थी। तीनों का दाना लाल था जिसे किसानों ने पसन्द नहीं किया। इन पर विकिरण कराकर जल्दी ही नई किस्मों का विकास किया गया। अम्बर रंग के दानोंवाली कल्याण सोना पी-वी-18 के बराबर उपज देती थी। मोटे दाने वाली सोनालिका भी जारी हुई जो काफी अच्छी है।

यद्यपि गेहूं की इन बौनी किस्मों के कारण उपज बहुत बढ़ गई है तथापि वैज्ञानिक हाथ पर हाथ रखे नहीं बैठे हैं। वे लगातार नई किस्मों के विकास में लगे हैं। ऐसी नई किस्मों पर कार्य हो रहा है जिनकी पत्तियां सीधी और अपेक्षाकृत पतली हों ताकि पौधे के निचले भागों में हवा का प्रवेश हो सके। ऐसी किस्म के पौधों में रोगकीटों के प्रकोप की सम्भावना भी कम रह जाएगी।

गिरने, टूटने, वर्षा और ओलावृष्टि सह सकने वाली किस्मों के विकास पर काम हो रहा है। भारतीय कृषि अनुसन्धान पूसा, नई दिल्ली द्वारा विकसित हीरा, उत्तर प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पन्तनगर, नैनीताल द्वारा विकसित यू-पी-301 और राजकीय कृषि कालेज जोधपुर द्वारा विकसित लाल बहादुर ऐसा ही 'ट्रिपल डवार्फ' त्रिजीनी या तिहरा बौना गेहूं है। इसका पौधा दुहरे या अर्ध बौने कल्याण, सोनालिका आदि से छोटा होता है। 1970 में हुई दिल्ली में भयंकर ओलावृष्टि के दौरान हीरा के पौधे शान से खेतों में खड़े रहे जबकि कल्याण सोना के खेत बिछ गए।

यही नहीं, अधिक प्रोटीन और लायसरेन युक्त तत्वों वाली किस्मों पर भी काम हो रहा है ताकि कुपोषणता की समस्या हल हो सके। कुछ प्रयोगात्मक गेहूं की किस्मों में 16-17 प्रतिशत तक प्रोटीन मिला है। काई जैसे पौधों के साथ संकरण कराकर 'ट्रिटिकेल' जैसी मानव निर्मित कृत्रिम फसलें तैयार की गई है। सचमुच विज्ञान ने कृषि क्षेत्र को यह बड़ी अनुपम देन दी है।

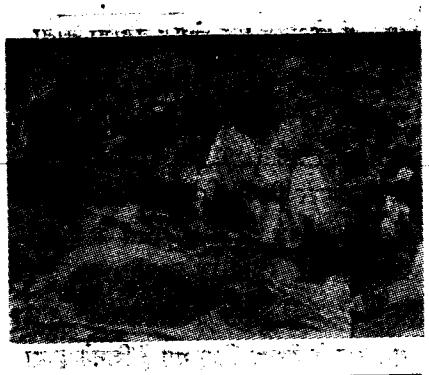

राष्ट्रीय आय में लाख उद्योग का महत्व

विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएं जुटाने के लिए कीट पतंगों से लेकर कृषि की विविध पद्धतियों द्वारा जीवनोपयोगी वस्तुओं का उत्पादन करना भारत की प्राचीन परम्परा है। प्राकृतिक वनस्पतियों से सम्पन्न हमारे देश में लाख उत्पादन रेशम उत्पादन की तरह एक प्रकार के कीड़ों द्वारा संचित लारयुक्त पदार्थ से किया जाता है। विश्व में भारत लाख का भण्डार माना जाता है क्योंकि यहां विश्व के उत्पादन का 80 प्रतिशत लाख पैदा किया जाता हैं।

लाख उत्पादन करने वाले देशों में भारत के अलावा बर्मा, पाकिस्तान, थाइलैंड, हिन्दचीन, श्रीलंका, जावा तथा चीन का प्रमुख स्थान है। यह उद्योग भारत का प्राचीनतम है और इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि यहां के प्राचीनतम साहित्य में यत्र तत्र इसका उल्लेख किया गया है। महाभारत में लक्षगृह तथा 'आइने अकबरी' में इसके विशेष प्रयोगों का वर्णन आया है। मुगलकालीन वार्निश तथा रंगसाजी की गई वस्तुओं के विशिष्ट नमूने आज भी बड़े बड़े संग्रहालयों में मौजूद हैं।

वर्तमान समय में लाख का उपयोग करने वाले उद्योगों में प्रमुख उद्योग इस प्रकार हैं (1) वार्निश तथा रंगसाजी (2) फर्नीचर की पालिश (3) चूड़ियां तथा ग्रामोफोन रिकार्ड निर्माण (4) चमड़े का परिसमापन (5) मुहर तथा लकड़ी पर सजावटी कार्य (6) विद्युत् विसंवाहन (7) गोंद, सीमेंट तथा आर्ट-इंक बनाना, (8) आतिशबाजी की वस्तुएं बनाना (9) जेवरों में भरना (10) रबड़ में मिलाना। यही कारण है कि आज लाख तथा लाख से बनी वस्तुओं का वार्षिक निर्यात लगभग 15 करोड़ रुपए का किया जाता है।

लाख उत्पादन के लिए लाख के कीड़ों का पालन लाख पोषित पौधों के एक सौ से अधिक प्रकार के पेड़ पौधों पर किया जाता है जिनमें पलास, बेर, कुसुम, खैर, बबूल, अरहर, लेफा, शारिया, टैलुरा, घोण्ट आदि प्रमुख हैं। लाख का कीड़ा परजीवी होता है जो वृक्षों, लताओं और झाड़ियों का रस चूसकर पलता है। लाख के छोटे बड़े कीड़े बड़ी संख्या में एक दूसरे

माधवानन्द देवलाल

से सटकर पेड़ों की टहनियों पर बैठते हैं और अपने शरीर से लारयुक्त पदार्थ निकाल कर अपने शरीर को ढक लेते हैं तथा इसी आवरण के अन्दर बढ़ते रहते हैं। बड़े होने पर नर कीड़े बाहर निकल आते हैं और मादा कीड़ों से सम्पर्क करते ही मर जाते हैं। यह जीवन क्रम वर्ष में दो बार होता है। कच्चे लाख को पेड़ों की डालियों से खुरच खुरच कर एकत्र किया जाता है जिसमें अनेक प्रकार की अशुद्धियां रहती हैं। कच्चे माल को चूर्ण करके पत्थर या सीमेन्ट की बनी नादों या यन्त्र चलित इस्पात के ढोलों में धोया जाता है तथा विशुद्ध पदार्थ को सुखाया जाता है। इसका दूसरा उत्पादन चपड़ा, जिसे लाख चूर्ण को पिघलाकर बनाया जाता है, बड़ा उपयोगी पदार्थ है। चपड़ा बनाने के लिए कच्चे लाख का आयात बर्मा और श्याम से भी किया जाता है। चपड़ा बनाने के लिए लाख के चूर्ण को मोटे कपड़े के थैले में भरकर उन्हें आंच में पिघलने के बाद थैलियों को निचोड़ा जाता है और गरम पानी से भरे बरतन में फैलाया जाता है जो जमने पर एक चुरमुरे पदार्थ के रूप में प्राप्त होता है। इसी पदार्थ को धातु की प्लेटों में गीली अवस्था में एकत्र करने पर गोल आकृति में बने कड़े पदार्थ को बटन लाख कहते हैं। लाख प्रशोधन का कार्य शक्ति चालित दबाव यन्त्रों द्वारा भी किया जाता है।

लाख उत्पादन करने वाले राज्यों में मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल और असम प्रमुख हैं। बिहार में कुल लाख उत्पादन का 41 प्रतिशत उत्पादन होता है। मध्यप्रदेश और पश्चिम बंगाल के उत्पादन का प्रतिशत क्रमशः 26 और 21 है। महाराष्ट्र और गुजरात में केवल 6 प्रतिशत उत्पादन होता है।

लाख उत्पादन मुख्य रूप से लाख पोषित वनस्पति के उत्पादन पर आधारित रहता है। लाख की खेती के लिए लाख उत्पादक कीड़ों को लाख पोषित पेड़ों पर छोड़ा जाता है। लाख उत्पादन की मात्रा लाख के कीड़ों के खाद्य पदार्थ की मात्रा पर आधारित रहती है। बड़े आकार के वृक्षों जैसे कुसुम, बेर और पलास में पोषित कीड़ों द्वारा अधिक उत्पादन होता है। कुसुम के वृक्षों पर चलने वाले कीड़ों को कुसुमी व अन्यत्र पलने वाले कीड़ों को रंगीनी कहते हैं। प्रत्येक प्रकार के कीड़ों की वर्ष में दो जीवन यात्राएं होती हैं। इस प्रकार एक वर्ष में चार फसलें पैदा होती हैं जो वैसाख, जेठ, कातिक तथा अगहन में एकत्र की जाती हैं। बैसाख की फसल सबसे

अधिक होती है। कुसुम के वृक्ष पर 12 से 36 पौण्ड तक तथा पीपल के वृक्ष पर 04 पौण्ड तक उत्पादन होता है।

लाख का उपयोग रोशनशाजी में सबसे अधिक किया जाता है। लकड़ी पर पालिश करना लाख का सबसे जाना माना इस्तेमाल है। चमड़े में रंग और मोम मिलाकर फरशों पर पालिश करने का मशाला तैयार किया जाता है। ग्रामोफोन के रिकार्ड बनाने के लिए पहले एक मात्र लाख का ही उपयोग होता था। इस कार्य के कच्चे माल की अत्यधिक मांग के कारण यह आवश्यक हो गया कि रिकार्ड प्लास्टिक के बनाकर इसका उपयोग अन्य कार्यों में किया जाए। लाख का उपयोग ऊन और फैल्ट को चिपका कर टोप बनाने में भी किया जाता है। चाकू और औजारों में धार बनाने के लिए जिस पहिए का इस्तेमाल किया जाता है वह पत्थर के कणों को चमड़े में मिलाकर बनाया जाता है। लाख में कुछ ऐसे गुण हैं जिसके कारण उसका बिजली के सभी कामों में बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जाता है। लाख का सबसे अधिक और सुगम उपयोग मोहर लगाने में किया जाता है। इसके लिए बटन लाख, चीनी, मिट्टी बैरोजा, सिन्दूर, तारपीन और पैरारैड को मिलाकर मोहर की लाख तैयार की जाती है। लकड़ी की तरह मिट्टी के बर्तनों में भी लाख चढ़ाई जाती है जिससे बर्तन सुन्दर, टिकाऊ, चमकीले और अधिक उपयोगी हो जाते हैं। भारत में चुनार (उत्तर प्रदेश) इस प्रकार के बर्तनों के लिए प्रसिद्ध है। वहां अनेक आकार प्रकार के बर्तन बना कर उन्हें पकाया जाता है और फिर उन पर लाख की तह ऊपर और नीचे चढ़ाई जाती है। ये बर्तन अन्य बर्तनों की अपेक्षा बहुत उत्तम माने जाते हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान बाहर से प्लास्टिक का माल आना बन्द हो गया था। इसलिए देश में लाख का एक ऐसा ढलाई चूरा बनाया गया जिससे विभिन्न वस्तुएं बनाई जा सकती थीं। चमड़े को स्प्रिट में घोलकर एक रोगन बनाया जाता है। इसका उपयोग लकड़ी में वार्निश करने में किया जाता है। लाख और अलसी का तेल मिलाकर एक प्रकार का रोगन तैयार किया जाता है जिसका उपयोग मोमजामा बनाने और रेल के डिब्बों को अन्दर से रंगने में किया जाता है। लाख के साथ दूसरी चीजें मिलाकर कुछ ऐसे मसाले तैयार किए गए हैं जिनके द्वारा अनेक वस्तुएं बनाई जाती हैं। इस प्रकार के उत्पादनों में एक खास प्रकार का कागज जो पानी पड़ने से खराब नहीं होता, प्रमुख है। लाख द्वारा बनाए गए धार लगाने वाले चक्के न तो जल्दी गरम होते हैं और न टूटते फूटते ही हैं। इसी मसाले की सहायता से बिजली के बल्ब के ऊपर की पीतल की टोपी को जोड़ा जाता है। लाख की चूड़ियां बनाना एक पुराना घरेलू उद्योग है। आजकल इसका स्थान कांच की चूड़ियों ने ले लिया है।

लाख का रंग उड़ाने के लिए उसमें सोडियम हाइपोक्लोराइड का घोल मिलाया जाता है जिससे लाख का रंग सफेद हो जाता है। सफेद लाख की विदेशों में बड़ी मांग रहती है। लाख उद्योग के अनुसन्धान कार्य में आवश्यक सहायता प्राप्त करने के लिए सन् 1925 में भारतीय लाख अनुसन्धानशाला की स्थापना की गई। इस अनुसन्धानशाला ने लाख की कृषि के लिए उन्नत तरीकों को खोजकर इस दिशा में अच्छी प्रगति की। आज विदेशी मुद्रा कमाने में लाख उद्योग सराहनीय भूमिका अदा कर रहा है। अमेरिका भारतीय लाख खरीदने वालों में प्रमुख देश है। भारत में कच्ची लाख का वार्षिक उत्पादन लगभग तीस हजार टन आंका गया है। इसका उत्पादन आदिवासी प्रधान क्षेत्रों में अधिक होने का प्रमुख कारण है कि यह उद्योग आदिवासियों का परम्परागत उद्योग माना जाता है। वर्तमान समय में सरकारी संरक्षण में इसके उत्पादन, प्रशोधन और निर्यात की व्यवस्था की जाती है। भारत के कुल उत्पादन का साठ प्रतिशत निर्यात किया जाता है जिसके लगभग साढ़े पांच करोड़ रुपए मूल्य की विदेशी मुद्रा वार्षिक रूप से अर्जित की जाती है। निर्यात की जाने वाली लाख में चमड़ा, बटन, मोम रहित तथा रंग रहित प्रकार की लाख का प्रमुख स्थान है। निर्यात की दिशा में भारतीय लाख विकास परिषद, रांची तथा इसके अन्तर्गत चलने वाली संस्था भारतीय लाख अनुसन्धान शाला, नामकुम द्वारा किए गए सराहनीय प्रयत्नों से यह उद्योग प्रगति के पथपर अग्रसर है।

लाख ही ऐसा प्राकृतिक पदार्थ है जो अपने विशिष्ट गुणों के कारण लोकप्रिय हुआ है। यह सस्ते और आसानी से उपलब्ध होने वाले घोलकों में सरलतापूर्वक घुल जाता है। इससे मजबूत, चिकनी चमकदार और जल्दी सूखने वाली आकर्षक वार्निश तैयार की जाती है। इसमें विद्युत सम्बन्धी गुण श्रेष्ठ हैं। लाख अभ्रक पर अच्छी तरह चिपकता है। इसमें जोड़ने के लिए अच्छी क्षमता रहती है। इसका विविध प्रकार के घोलकों जैसे हाइड्रोकार्बन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यह गन्धहीन तथा स्वादहीन और स्वास्थ्य के लिए हानिरहित है।

लाख उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में अतिरिक्त आय बढ़ने का सबसे सरल साधन है। जलवायु को अनुकूलता से लाख पोषक पेड़ पौधे देश भर में पाए जाते हैं। खेतों की मेड़ों तथा बाड़ों पर सुगमता से ऐसे पेड़ पौधे उगाकर लाख की खेती की जा सकती है। वन प्रधान क्षेत्रों में और अधिक अनुसन्धान करके इस उद्योग के वैज्ञानिक तरीकों का पता लगा कर ग्रामीण जनता को इस दिशा में प्रोत्साहित करने और मार्ग दर्शन करने की आवश्यकता है। खादी और ग्रामोद्योग कमीशन ने उपरोक्त उद्देश्य से इस उद्योग के विकास का कार्य अपने हाथ में लिया है और वह भारतीय लाख विकास परिषद रांची तथा भारतीय लाख अनुसन्धानशाला नामकुम का सहयोग प्राप्त कर उद्देश्य की पूर्ति करने में तत्पर एवं अग्रसर है। ●

कृषि क्रान्ति में पशुपालन कार्यक्रम

श्रीराम पाण्डेय

भारत की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति ऐसी है कि कृषि के विकास कार्यक्रम में पूर्ण यन्त्रीकरण नहीं किया जा सका है। आबादी का 80 प्रतिशत भाग गावों में रहता है। इतनी बड़ी जनसंख्या का अधिकतर भाग खेती पर आश्रित है। कृषि योग्य भूमि छोटी छोटी जोतों में बंटी हुई है। हमारे देश के किसानों की माली हालत अत्यधिक कमजोर है। उसके पास अच्छे बैल, आधुनिक कृषि यन्त्र तथा उन्नत किस्म के बीज-खाद की खरीद के लिए धन नहीं है। अतः किसानों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के आधार स्तम्भ पशु ही हैं। इनसे खेती के साथ साथ माल ढोने का काम भी लिया जाता है।

आवश्यकता है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश को खाद्यान्न में आत्मनिर्भर बनाने के साथ साथ पशुधन में विकास के लिए ठोस कार्यक्रम बनाया जाए। तभी देश में हरित क्रांति का आन्दोलन सफल हो सकता है।

यह कैसी विडम्बना है कि भारत में विश्व के एक चौथाई पशु हैं किन्तु हम देश के लिए आवश्यक दूध एवं तत्सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हैं। जिस प्रकार देश की आबादी लगातार बढ़ती जा रही है उसी प्रकार पशुओं की भीड़ भी बढ़ती जा रही है। फलतः अच्छी नस्ल के पशुओं के स्थान पर अनुपयोगी पशु बढ़ते जा रहे हैं जो भारत जैसे अर्थसंकट-ग्रस्त देश के लिए एक खतरनाक स्थिति है।

यह एक विस्फोटक स्थिति है। देश की आबादी बढ़ने से दूध की मांग लगातार बढ़ती जा रही है। जिस देश में कभी दूध की नदियां बहती थीं उस देश को कनाड़ा तथा अमरीका से दूधजनित पदार्थों का आयात करना पड़ता है। पशुओं की संख्या इतनी बढ़ती जा रही है कि उन्हें भरपेट चारा नहीं मिलता है और वे धीरे धीरे अनुपयोगी होते जा रहे हैं।

पशुओं का अधिक होना उतना ही खतरनाक है जितना देश में आबादी का बढ़ना।

पशुधन का विकास

ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में पशुओं का योगदान महत्वपूर्ण है। गांवों में कृषि तथा उसके सहायक धंधे पशुपालन का विकास ही गांवों का सच्चे अर्थों में विकास होगा। यह तभी सम्भव है जब पशुओं की नस्ल सुधारी जाए तथा उनके लिए पौष्टिक चारा मुहैया कराया जाए।

पशुधन के विकास के लिए आवश्यक है कि मौजूदा देशी नस्लों की गाय-बैल की नस्ल सुधारने के लिए संकरण योजना आरम्भ की जाए। विदेशों से उन्नत किस्म के पशु मंगाए जाएं। अलाभकारी पशुओं को तुरन्त हटा दिया जाए जिससे किसान अच्छे किस्म के पशुओं की उचित देखभाल कर सकें।

कृत्रिम गर्भाधान

पशुओं की नस्ल सुधारने के लिए कृत्रिम गर्भाधान बहुत लाभदायक योजना है। इस योजना के अन्तर्गत पशुपालन केन्द्रों में अच्छी किस्म के सांडों का वीर्य इकट्ठा किया जाता है तथा इसे प्रशीत करके (ठंडा रखने की प्रक्रिया) देश के अन्य पशुपालन केन्द्रों में आवश्यकतानुसार लाया-ले जाया जा सकता है।

इस योजना से जगह जगह सांडों के रखने की आवश्यकता नहीं रहती तथा पशुपालकों को सांडों के रख रखाव से बचत होती है। आर्थिक दृष्टि से भी कृत्रिम गर्भाधान प्रणाली लाभप्रद है। प्राकृतिक ढंग से जो सांड 10-15 गाय-भैंस ग्याभिन करने की क्षमता रखता है, कृत्रिम गर्भाधान के तरीके से यह संख्या 15 से 20 गुनी अधिक बढ़ाई जा सकती है। इस तरीके से पैदा किए गए पशु स्वस्थ होते हैं जिनसे कार्यक्षमता बढ़ती है और पशुओं का जननेन्द्रिय रोगों से बचाव होता है।

विकास की सम्भावनाएं

पशुओं के कृत्रिम गर्भाधान का प्रसार-प्रचार सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। इससे देश के पशुधन के विकास की अच्छी सम्भावनाएं हैं। अच्छी नस्ल के पशु देश के किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने में काफी हद तक सहायक होंगे क्योंकि कृषि के साथ ग्रामीण कृषकों का सहायक उद्योग पशुपालन है। हमारे देश की कृषि व्यवस्था का मेरुदण्ड पशु ही हैं जिनके बलबूते पर कृषि उत्पादन निर्भर करता है।

पशुधन के विकास से हमारे कृषि उत्पादन का विस्तार तो होगा ही साथ में देश में पोषक आहार की जो कमी है उसके लिए पर्याप्त मात्रा में दूध-मक्खन की समस्या का भी निराकरण हो सकेगा। ●

हमारे नए कृषि पण्डित और उद्यान पण्डित

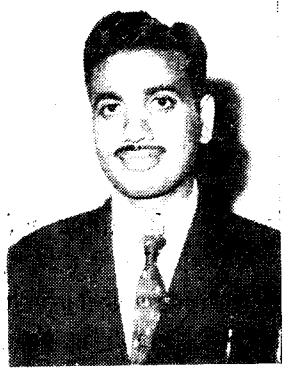

वाई० मल्ला रेड्डी

देश के 16 प्रतिशत किसानों ने धान और गेहूं की अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं और अंगूर, संतरा, केला, आम और नारंगी की उद्यान पंडित प्रतियोगिताओं में तथा एक नगर परिषद ने शहरी कूड़ा-करकट खाद प्रतियोगिता में पुरस्कार जीते हैं। ये प्रतियोगिताएं कृषि मंत्रालय द्वारा आयोजित की गई थीं। सभी विजेताओं को 23 अक्तूबर, 1971 को यहां भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान के सभा भवन में आयोजित विशेष समारोह में पुरस्कार दिए गए।

धान (खरीफ 1970-71) प्रतियोगिता में पार्वती नगर (मैसूर) के श्री वाई० मल्ला रेड्डी को 3,000 रु० नकद और कृषि पंडित के प्रमाण पत्र का प्रथम पुरस्कार मिला है। उन्होंने प्रति हैक्टेयर 15,862 किलोग्राम धान का उत्पादन किया। महाराष्ट्र में नार्तवाडे गांव के श्री ध्यानदेव तुकाराम शिन्दे और मध्य प्रदेश में सिहनपुरी गांव के श्री शारदा प्रसाद शुक्ल को क्रमशः द्वितीय और तृतीय पुरस्कार मिले हैं।

गेहूं (रबी 1970-71) प्रतियोगिता में चिखाली (महाराष्ट्र) के श्री रमेश राजभाऊ बोडे को प्रति हैक्टेयर 16,117 किलोग्राम गेहूं पैदा करने पर 3,000 रु० नकद और कृषि पंडित के एक प्रमाण पत्र का प्रथम पुरस्कार मिला है। दूसरे और तीसरे स्थान पर क्रमशः धनेरियाकलां (मध्यप्रदेश) के श्री प्रभुलाल भुंवरलाल और रामनगर (राजस्थान) के भी गुरचरणसिंह भाटिया को पुरस्कार मिले हैं।

अखिल भारतीय फसल प्रतियोगिताओं का आयोजन 1950 से केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय द्वारा किया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारें, ग्राम, जिला और राज्य स्तर पर तथा केन्द्रीय सरकार अखिल भारतीय स्तर पर फसल प्रतियोगिता आयोजित करती हैं। किसी भी वर्ष में राज्य स्तर प्रतियोगिता में जीतने वाले पहले 6 विजेता उससे अगले वर्ष की अखिल भारतीय फसल प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं।

गुरचरण सिंह भाटिया

सागिराजु पेदासोमाराजु

कर्णीसिंह

करतार सिंह

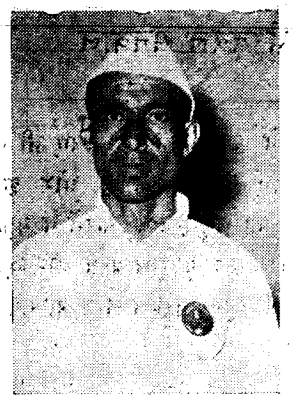

ध्यानदेव तुकाराम शिन्दे

शारदा प्रसाद शुक्ल

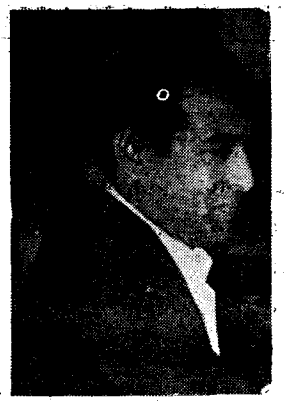

रमेश राजभाउ बोन्द्रे

प्रभुलाल भंवारला

अंगूर प्रतियोगिता (1968-69 और 1969-70) में जीड़ी-माटला गांव, आन्ध्रप्रदेश के श्री एस० सोमा राजू और अथिगानूर (तमिलनाड) के श्री के० एम० पोन्नुस्वामी चेट्टियार को क्रमशः पहला और दूसरा पुरस्कार मिला है। सन्तरा प्रतियोगिता (1968-69) में श्री गंगानगर (राजस्थान) के महाराजा कर्णीसिह और सरदारसिह को क्रमशः पहला और दूसरा इनाम मिला है। केला प्रतियोगिता (1970-71) में चिखोदरा (गुजरात) के श्री देसाईभाई जीवाभाई पटेल को पहला स्थान और सतोड़ (महाराष्ट्र) के श्री भंजी मीठाराम पाटिल को दूसरा स्थान मिला है। आम प्रतियोगिता (1970-71) में परिया (गुजरात) के मैसर्स मोरारजी एग्रीकल्चरल प्रोडक्ट्स (प्रा० लि०) और श्रीरंगम (तमिलनाडु) के श्री एस० आर०वी० थाथाचरियार को क्रमशः पहला और दूसरा इनाम मिला है। नारंगी प्रतियोगिता (1970-71) में शेरपुर मक्का (पंजाब) के सरदार करतारसिह ढिल्लों को पहला और बड़ा नयागांव (राजस्थान) के श्री मदनलाल तपाड़िया को दूसरा इनाम मिला है।

ये प्रतियोगिताएं पहले राज्य स्तर पर और फिर अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित की जाती हैं। प्रथम पुरस्कार पाने वाले उद्यान को पण्डित का प्रमाणपत्र, एक कांस्यपदक और 5000 रुपए के सरकारी ऋणपत्र दिए जाते हैं। इन प्रतियोगिताओं में से प्रत्येक में द्वितीय स्थान पाने वाले को प्रशस्तिपत्र और 2000 रुपए के सरकारी ऋणपत्र दिए जाते हैं।

शहरी कूड़ा-करकट खाद प्रतियोगिता (1967-68) में मध्य-प्रदेश की बरहामपुर नगर परिषद ने पहले दोनों स्थान जीतकर 5000 रुपए का नकद पुरस्कार और मेरिट कप प्राप्त किया हैं।

देसाईभाई जीवाभाई पटेल

दयाभाई जीवनभाई पटेल

एस० आर० वी० थाथाचारियार

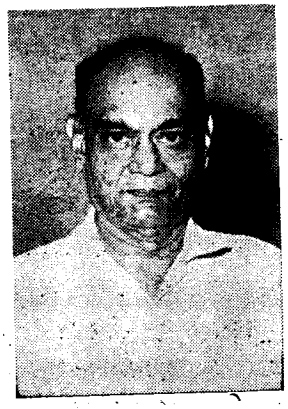

करतारसिह ढिल्लों

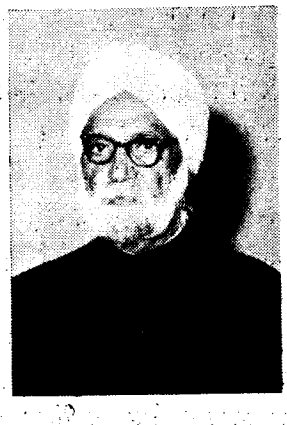

कृषि विकास की नवीन मान्यताएं

भैरवदत्त सनवाल

भारत में नियोजन का उद्देश्य जनता के रहन-सहन में समुचित वृद्धि करना और जीवन यापन की सुख सुविधाएं प्रदान करना है जो राष्ट्र के संसाधनों तथा उत्पादन की वृद्धि से सम्भव है। तद्नुसार योजनाओं के अन्तर्गत कृषि विकास पर ध्यान दिया गया। कृषि विकास को राज्य की अर्थव्यवस्था और औद्योगीकरण का मूलाधार माना गया। शनैः शनैः कृषि विकास कार्यों पर अधिकाधिक ध्यान दिया जाने लगा और चौथी योजना में कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। इसके फलस्वरूप कृषि समस्याओं को उचित रूप से सोचने, समझने और कार्यान्वित करने का अवसर प्राप्त हुआ और कृषि क्षेत्र में नया मार्ग प्रशस्त हुआ। अब यह सहज ही कहा जा सकता है कि भारत में "हरित क्रान्ति" का वातावरण बना है और यह कहने में हम संकोच नहीं अनुभव करते कि कृषि उत्पादन में हम शीघ्र ही आत्मनिर्भर हो जाएंगे।

इसी पृष्ठभूमि में हमें इस बात पर भी ध्यान रखना है कि खाद्य उत्पादन बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए भी पर्याप्त रहे जो तभी सम्भव है जब कृषि उत्पादन में प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हो, जैसी राष्ट्रीय विकास परिषद ने सिफारिश की है। निस्सन्देह यह वृद्धि आगामी 10 वर्षों तक बनाए रखनी पड़ेगी। इधर दो-तीन वर्षों में कृषि विकास की दिशा में जो कार्य हुए हैं वे उत्साहवर्द्धक हैं। फिर भी हमें अपने प्रयासों में कोई ढील नहीं आने देनी है, अन्यथा आत्मनिर्भरता का हमारा स्वप्न अधूरा रह जाएगा।

कृषि विकास की अनेक मूलभूत समस्याएं यह मांग करती है कि इनके समाधान के लिए नियोजित कदम उठाए जाएं। यह उल्लेख करना अनुपयुक्त न होगा कि अधिक उपज देने वाली किस्मों का कार्य तथा कृषि विकास की अनेक परियोजनाएं जो अधिक उत्पादन करने में सक्षम हैं, अधिकांशतः सीमित क्षेत्रों और बड़े किसानों तक ही सीमित रही है। कृषकों का एक बड़ा वर्ग जिन्हें छोटे किसानों की संज्ञा दी जाती है, इस हरित क्रान्ति से लाभान्वित नहीं हो सका है। अतः कृषि विकास के कार्यक्रम में हमें अनिवार्य रूप से छोटे किसानों को भी सम्मिलित करना पड़ेगा और उनके मध्य भी कृषि की वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रसार करना होगा। इसके अतिरिक्त असिंचित और सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए भी कृषि विकास की नई योजनाएं बनानी पड़ेंगी। आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में कृषि योग्य भूमि लगभग 15 करोड़ हैक्टर है जिसमें से लगभग 3 करोड़ 70 लाख हैक्टर क्षेत्रफल ही इस समय सिंचित है। शेष क्षेत्रफल वर्षा के जल के सहारे ही सींचा जाता है। कभी तो वर्षा अनुकूल हो जाती है और कभी इसकी कमी या बाढ़ की स्थिति शोचनीय एवं भयावह स्थिति उत्पन्न कर देती है। सर्वेक्षण से यह भी पता चला है कि आने वाली दशाब्दी में सिंचाई के साधनों के भरसक उपयोग के बाद भी देश में लगभग साढ़े आठ करोड़ हैक्टर क्षेत्रफल ही सिंचित क्षेत्रफल में परिवर्तित किया जा सकेगा। अस्तु, यह सम्भावना है कि देश की लगभग आधी कृषि योग्य भूमि सिंचाई तथा कृषि के मामले में पिछड़ी ही रहेगी जब तक कि हम इसके विकास की कोई निश्चित और नई योजना न बनाएं।

सौभाग्य से सूखाग्रस्त क्षेत्र की समस्या इतनी विकराल नहीं है कि इसका समाधान न किया जा सके। आधुनिक वैज्ञानिक साधनों ने इस क्षेत्र के लिए भी नई सम्भावनाएं उत्पन्न की हैं और कृषि वैज्ञानिक यह अनुसन्धान करने में सफल हुए हैं कि देश के सूखाग्रस्त और शुष्क क्षेत्रों में भी हरित क्रान्ति लाई जा सकती है।

यह समस्या भी पर्याप्त चिन्ता का विषय है कि फसल काटने और मांड़ने के बाद सही ढंग से किसानों के घर तक पहुंच जाए। इस रबी में असामयिक वर्षा ने देहाती क्षेत्रों में बड़ी विषम स्थिति उत्पन्न कर दी। इस समस्या ने अब राज्य सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है कि फसल की कटाई के बाद की समस्याएं भी बड़ी जटिल हैं। यह बड़ी सामयिक समस्या है जिसके हल के लिए राज्य सरकार पूरी तरह तत्पर है। यह कार्यक्रम भी विचाराधीन है कि ग्रामीण क्षेत्रों में टीन के छतदार खलिहान बनें और टीन की खत्तियां कृषकों को उपलब्ध कराई जाएं। यह बहुत बड़ा कार्य है जो सम्भवतः केवल सरकारी साधन से सम्भव न हो सके। अतः यह श्रेयष्कर होगा कि गैर सरकारी और निजी संस्थाएं आगे आकर इस ओर उत्तरदायित्व सम्भालें।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि कृषि विकास अनेक विभागों तथा भिन्न भिन्न वर्गों के कार्यकर्त्ताओं के समन्वय पर आधारित है। उदाहरणार्थ कृषि वैज्ञानिक फसलों की नई जातियों का प्रादुर्भाव करते हैं, वह उन्नत बीजों की संस्तुति करते हैं, कृषि इंजीनियर उन्नत कृषि यन्त्रों का निर्माण करते हैं, विक्रय समितियां एवं निजी विक्रेता किसानों की उपज की बिक्री करते हैं, राज्य सरकार कृषि सम्बन्धी निर्णयों और नीतियों का निधारण करती हैं, सहकारी समितियां और

राष्ट्रीयकृत बैंक कृषकों को ऋण की सुविधाएं प्रदान करती हैं आदि आदि। अस्तु, इन सभी कार्यकलापों में जिनसे कृषि उत्पादन सम्भव होता है, सही प्रकार से समन्वय होना चाहिए। इस प्रकार के संगठन की सम्भावना पर भी विचार करना श्रेयस्कर होगा जो या तो निगम के रूप में अथवा सार्वजनिक संस्था के रूप में हो और जो खाद्यान्न उत्पादन से उसके विक्रय तक के कार्यक्रमों को व्यापारिक तौर-तरीके से यथासम्भव चलाने में योगदान दे सकें। कृषि के क्षेत्र में एक नया दृष्टिकोण यह भी होना चाहिए कि कृषि कार्य को एक विकसित उद्योग समझा जाए और उसके उचित विनियोग पर समुचित ध्यान दिया जाए। कृषि उत्पादन मुफ्त नहीं हो जाता, उसके लिए धन की आवश्यकता पड़ती है। भूमि विकास, उन्नत बीज, खाद एवं उर्वरक, सिंचाई, कृषि यन्त्रों और कीटनाशक दवाइयों के लिए समुचित धनराशि की व्यवस्था करनी पड़ती है और कृषक या उत्पादक को श्रम भी करना पड़ता है। विकसित उद्योग की तरह इसमें हानि लाभ की जोखिम भी उठानी पड़ती है। इन साधनों के समुचित उपयोग से ही कृषि उत्पादन सम्भव होता है। जितने अच्छे हमारे साधन होंगे निश्चय ही अनुकूल वातावरण में उतना ही अच्छा उत्पादन होगा।

कृषि वैज्ञानिक अब इस बात पर सहमत हो गए हैं कि भिन्न-भिन्न कृषि क्षेत्रों के लिए पृथक-पृथक योजनाएं कार्यान्वित की जाएं। उत्तर प्रदेश को ही लीजिए, यह काफी बड़ा राज्य है, जहां कुछ क्षेत्र अधिक उपजाऊ और कुछ क्षेत्र खेती के दृष्टिकोण से अनुकूल नहीं है। निश्चय ही जो क्षेत्र अधिक उपजाऊ हैं वे सघन कृषि कार्यक्रम के अन्तर्गत लिए जाएं। इससे कुल खाद्यान्न उत्पादन में शीघ्र ही अच्छे परिणाम हमारे सामने आएंगे। फिर भी भूमि, मिट्टी और जल की गिरावट के फलस्वरूप अविकसित क्षेत्रों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। यहां भूमि को विकसित करने के उपरान्त ही विकास की परियोजनाएं आरम्भ की जाएं।

उन व्यक्तियों के अनुभवों से जो कृषि विकास और कृषि उद्योग निगम के अनुभव से परिपूर्ण हैं, यह स्पष्ट विचारधारा हमारे सामने आई है कि कृषि विकास की योजनाएं उद्योग सम्बन्धी विकास योजनाओं के साथ ही निर्धारित की जाएं। कृषि विकास इस पर बहुत कुछ निर्भर करता है कि कृषि पूंजी के कौन-कौन से साधन उपलब्ध हैं और क्या कृषकगण सहज ही इन्हें प्राप्त कर सकते हैं।

इस बात में दो मत नहीं हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में विकास खण्डों की स्थापना से किसानों में नई जागृति उत्पन्न हुई है और प्रसार कर्मचारियों के कार्यकलापों से गांवों में विकास का नया सन्देश पहुंचा है।

कृषि विकास प्रत्येक के लिए निष्ठा और परिश्रम का कार्य है। सभी के योगदान से ही खेती में चार चांद लग सकते हैं। कहावत है—"भूमि और पौधे सूत्र से शक्ति प्राप्त करते हैं परन्तु कृषि विकास व्यक्तियों से शक्ति ग्रहण करता है।" परिश्रम और प्रगति में विश्वास रखने वाले कर्मचारी और कार्यकर्त्ता ही अपने दृढ़ संकल्प और मनोयोग से वह वातावरण बना सकते हैं जो न केवल हरित क्रान्ति की दिशा में वरन् गांव के समग्र विकास की दशा में सहायक होगा।

●

धरती का भगवान है

लक्ष्मीप्रसाद मिश्र 'कविहृदय'

दुखियों को वह गले लगाता, करता उनका त्राण है,
राष्ट्रवीर, मानवता-पूजक, धरती का भगवान है।

✧ ✧ ✧ ✧

सम्हल, सम्हल, कर्त्तव्य भूमि पर, बढ़ा रहा जो पांव है,
आग उगलती रवि किरणों भी, बनती जिसकी छांव हैं।
वर्षा की घनघोर झड़ी में जिसे न कोई ठांव है,
घोर निराशा के कुहरे से जकड़ा जिसका गांव है।

✧ ✧ ✧ ✧

नित्य नए संघर्षों में पल, जो जगजीवन चला रहा,
कष्ट कंटकों, अभाव में जल, भाग्य दीप निज जला रहा।
रख ऊंचे आदर्श, सत्यहित, प्राण लुटा, नित भला रहा,
बोकर श्रम के बिन्दु कृषक वह, पर हित में तन गला रहा।

✧ ✧ ✧ ✧

जिसके हैं परिवेश नए नित, रहन सहन भी सादा है,
जो थोड़े में काम चलाता, नहीं चाहता ज्यादा है।
दुखियों को वह गले लगाता, करता उनका त्राण है,
राष्ट्रवीर, मानवता पूजक, धरती का भगवान है।

समाजवाद और हमारी परम्पराएं

समाजवाद समाज की असंगतियों, विसंगतियों और त्रुटियों को दूरकर समाज में एक नई चेतना, क्रान्ति तथा जागरण उत्पन्न करने की प्रक्रिया है।

समाजवाद सिर्फ पूंजी की समानता में ही नहीं, बल्कि समाज के बहुमुखी विकास के लिए चिन्तन की प्रक्रिया को बदल देने में विश्वास रखता है। भारत की वर्तमान दशा में हर प्रकार के विष को शमन करने की शक्ति समाजवाद में निहित है। यदि एक बार देश की जनता वास्तविक समाजवाद को समझने का प्रयास करेगी तो वह अवश्य अपने क्षणिक स्वार्थ को न देखकर केवल सामूहिक हित को ही देखेगी जिसमें उन्हीं का स्थायी स्वार्थ निहित है। समाजवाद छुआछूत, जातपांत, घृणा, वैमनस्य और प्रतिशोध की भावना को मिटाकर समाज को प्रेम के सूत से बांधना चाहता है।

आधुनिक समाजवाद के जन्म से पूर्व ही हमारे चिन्तक और मनीषी आर्थिक शोषण, विषमता, वर्गभेद की बुराइयां कर चुके हैं और "वसुधैव कुटुम्बकम्" का नारा देकर दुनिया के लिए सुख और शान्ति की कामना कर चुके हैं। उनका विचार था कि धर्म, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए अर्थ को साध्य के रूप में नहीं बल्कि साधन के रूप में स्वीकार किया जाए। हमारे चिन्तकों और मनीषियों ने अर्थ की उपेक्षा नहीं की है और न तो उसे नकारा ही है किन्तु अर्थ को ही सर्वोपरि मानने के पक्ष में वे कभी भी नहीं रहे। अर्थ को तो मात्र उन्होंने साधन या माध्यम माना है। सामाजिक उन्नयन और सुख शान्ति की स्थापना भारतीय संस्कृति का चरम लक्ष्य रहा है।

आज हमारा समाज अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, गलत परम्पराओं, प्रपंचों से ग्रस्त है। सम्पूर्ण सामाजिक परिवेश रोगाक्रान्त है। स्वार्थ से भरे हुए इस भौतिकवादी युग में, जहां हिंसा, घृणा वैमनस्य, प्रतिशोध और अशान्ति का ही बोलबाला है वहां अहिंसा, प्रेम, ऐक्य, के सिद्धान्त से ही सुन्दर परिणामों का उदय हो सकता है। जिस समाज में रहना है, वह अगर पवित्र, स्वच्छ और स्वस्थ नहीं हुआ तो रहना दूभर हो जाएगा। समाजवाद का मूल उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक उन्नयन ही नहीं, बल्कि व्यक्ति को इन्सान बनाना है जो उक्त भावों को अपने जीवन में चरितार्थ कर सके।

समाजवाद समाज में किसी को बड़ा या छोटा, अमीर या गरीब, ऊंच या नीच नहीं मानता। वह तो एक मानव सत्ता में विश्वास रखता है। भारतीय दर्शन में स्पष्ट शब्दों में पूंजी को नकारा नहीं है बल्कि इसके अनुसार व्यक्ति के पास सम्पत्ति उतनी ही होनी चाहिए जिससे परिवार का भरण पोषण हो जाए और द्वार पर आए हुए अतिथियों की अभ्यर्थना की जा सके। कबीर की यह उक्ति भी इसी बात का समर्थन करती है—

"सांई इतना दीजिए, जामें कुटुम्ब समाय।
मैं भी भूखा नारहूं, मेरा साधु न भूखा जाय॥

कहीं कहीं समाजवादी व्यवस्था के अन्तर्गत धनिकों के हाथों से पूंजी छीनकर सर्वहाराओं के हाथों में सौंपने की बात कही जाती है। भारत के समाजवाद में ऐसी बात नहीं। हमारे मनीषियों ने जिस समाज की परिकल्पना की वह सभी प्रकार की दुर्बलताओं से रहित है। अन्याय, शोषण, उत्पीड़न और दूसरे का स्वत्व हरण करने को वृत्ति है ही नहीं, वहां तो सब समान हैं।

जो लोग ऐसा सोचते हैं कि पूंजी के सम्यक् विभाजन से ही सारे समाज में समानता आ जाएगी उनका सोचने का तरीका गलत है। मानव की मूल प्रवृत्ति लड़ने की है। एटम बम से पहले वह तोपों और बन्दूकों से लड़ता था, उससे पहले तीरों और तलवारों से, इससे भी पहले पत्थरों और लोहों के हथियारों से और सबसे पहले दांतों और नाखुनों से। एटम बम को समाप्त करने से मनुष्य का लड़ना बन्द हो जाएगा, यह बात बेबुनियाद है। ठीक उसी प्रकार पूंजी के समाप्त हो जाने के बाद भी आदमी परम्पराओं, धर्मों के नाम पर भिड़ेगा, रीति-रिवाजों के नाम पर लड़ेगा और अपने स्वतन्त्र विचारों के नाम पर लड़ेगा। अगर इस लड़ाई को बन्द करना है, अगर सचमुच में सुख शान्ति की स्थापना करनी है तो मनुष्य के विचारों और चिन्तन प्रक्रिया में आमूल परिवर्तन करना होगा और यह बताना होगा कि मानव मात्र एक है और मानव धर्म दुनिया का सबसे बड़ा धर्म है। जब तक मानव और मानव के बीच प्रेम उत्पन्न नहीं होगा, तब तक समानता और सुख की बात ही नहीं की जा सकती। हमारा सम्पूर्ण साहित्य इसी प्रेम, सद्भावना और विश्वास पर आधारित रहा है।

हमारा सिद्धान्त मानवता का सिद्धान्त है और हमारा दर्शन समाज का दर्शन है। यह तथ्य हृदयंगम तो तभी हो सकता है जब बुद्धि में बल और हृदय में सच्ची श्रद्धा हो। आज संसार में समाजवाद के विभिन्न रूप है। परन्तु भारतवर्ष की जनता के लिए स्वभावतः भारतीय संस्कृति पर आधारित समाजवाद ही अभीष्ट है। सच्चा समाजवाद समाज को सत्य, अहिंसा और शान्ति के मार्ग पर लाकर प्रत्येक मनुष्य में दया और प्रेम जाग्रत करना चाहता है। समाज के इस जागरण में ही भारतीय जनता का कल्याण है। इसमें सन्देह नहीं कि भारतीयों के लिए ही नहीं अपितु विश्व के मानव मात्र के लिए यदि कोई मार्ग है तो हमारा समाजवाद ही है, जिसका अनुसरण सर्वथा स्वभावानुकूल और सहज कहा जा सकता है।

भगवानदास

गुड़ तुझ में कितने गुण !

नरेन्द्र भट्ट

कृषि के दृष्टिकोण से तो गुणवान् गुड़ भारतीयों का प्रिय पदार्थ रहा ही है किन्तु अनुसन्धान जिज्ञासुओं ने गुण की दृष्टि से गुड़ को चीनी से कहीं अधिक गुणवन्त और समृद्ध पाया है। गुड़ की बाजार में चीनी से कीमत कम है, अतएव गुणशाली गुड़ गरीबों के खाद्य पदार्थों के बीच पर्याप्त रूप से प्रिय रहा है। भारत के निम्न मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग में, जिसमें कृषक वर्ग विशेष रूप से उल्लेखनीय है, मनोहर और मधुर चीनी अब भी अपना विशेष स्थान नहीं बना पाई है।

बहुत प्राचीन काल से अबतक ग्राम्य संस्कृति में मांगलिक कार्यों में गुड़ का उपयोग किया जाता है। गांवों में चाहे विवाह हो अथवा कोई अन्य आनन्द का अवसर मिठाई की जगह गुड़ लोगों को थोड़ी बहुत मात्रा में वितरित किया जाता है। कुछ फलित ज्योतिष को माननेवाले लोग तो यात्रा के पूर्व गुड़ की छोटी सी डली खाकर जाते हैं। कदाचित कुछ व्यक्ति इसे चाहे अन्धविश्वास मानें, किन्तु शुभ कार्यों में गुड़ के उपयोग की परम्परा में अब भी अनेक लोगों की अटूट श्रद्धा है।

इस आधुनिक युग में भी गुड़ चीनी के मुकाबले गुणों की दृष्टि से अपनी सक्षम स्थिति बनाए हुए है। इस तथ्य के प्रमाण उन विशेषज्ञों के अनुसन्धान कार्य हैं, जिन्होंने गुड़ का रासायनिक विश्लेषण इस प्रकार किया है—

	गुड़ में	चीनी में
खनिज द्रव्य	3.26 प्रतिशत	0.02 प्रतिशत
ग्लूकोज	21.20 ,,	0.00 ,,
सुक्रोज	29.70 ,,	99.40 ,,
जल	8.86 ,,	0.04 ,,

चीनी ही क्या, गुड़ का मुकाबिला अन्य कई पौष्टिक पदार्थ नहीं कर पाते। गुड़ में 11.4 मिलीग्राम प्रतिशत लोहा होता है, जबकि पालक में 1.3, आलू में 8.5 मिलीग्राम प्रतिशत लोहा होता है। फलों के अन्तर्गत केले में 0.4, अमरुद में 1.00 तथा आवले में 0.3 मिलीग्राम प्रतिशत लोहा मिलता है। यहां तक कि अंगुर में लोहा गुड़ की तुलना में कम पाया जाता है क्योंकि अंगूर में लोहे की मात्रा 0.4 प्रतिशत ही है।

लोहे के अतिरिक्त गुड़ में कैल्शियम 75.00 प्रतिशत मिलीग्राम, फारफोरस 38.00 प्रतिशत मिलीग्राम होते हैं। एक अन्य विश्लेषण के अनुसार गुड़ में 65.0 भाग शक्कर, 0.04 भाग फास्फोरस, 0.4 भाग प्रोटीन, 0.08 भाग कैल्शियम, 0.1 भाग चिकनाई होती है। गुड़ में विटामिन 'ए' और विटामिन 'बी' पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं जबकि ये दोनों जीवन सत्व शक्कर में नहीं होते। एक औंस गुड़ में 1.80 पैंटोथेनिक एसिड, 0.626 नायाचिन, 0.048 वायोरिन, 0.054 पाईरियोडक्सिन, 0.024 थियामिन, 0.066 रिवोफ्लाविन और 0.0112 मिलीग्राम फोलिक अम्ल पाया जाता है। गुड़ में इनोसियरल की मात्रा 50.00 मिलीग्राम प्राप्त होती है।

आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से गुड़ त्रिदोषनाशक, प्रमेहनाशक, थकावट को दूर करनेवाला और पाचनशक्ति को बढ़ाने वाला है। हमारे यहां गुड़ के चार भेद माने गए हैं। पहला धौत या स्वच्छ, दूसरा अधौत या अस्वच्छ, तीसरा नवीन चौथा पुराना। इन चारों में पुराना गुड़ श्रेष्ट माना जाता है। एक या दो वर्ष पुराना गुड़ तो गुणों का खजाना माना जाता है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में पुराने गुड़ के गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है पुराना गुड़ जल्दी पचनेवाला, स्वास्थ्य वर्धक, त्रिदोषनाशक, वीर्य और रक्तवर्धक तथा भूख को बढ़ानेवाला है।

महर्षि चरक के मतानुसार गुड़ रक्त मांस, मेद और मज्जा में वृद्धि करने वाला है। कई रोगों में गुड़ हानिकारक है। नवीन गुड़ में दो दोष हैं। पहला यह कि वह कृमिवर्धक है, दूसरा यह कफवर्धक है। लेकिन नवीन गुड़ का कुछ माह बाद उपयोग करें तो उसमें उक्त अवगुण नहीं

रहते। रक्त और पित्त दोष सम्बन्धी रोगियों को नवीन गुड़ का उपयोग नहीं करना चाहिए। कुछ रोगों में भी गुड़ से परहेज किया जाता है।

पुराने गुड़ में विज्ञ अधिक गुण बताते हैं। पुराने गुड़ से हमारा यहाँ अभिप्राय एक या दो वर्ष पुराने गुड़ से ही है। तीन वर्ष पुराना गुड़ गुणों में कुछ हीन हो जाता है। देहातों में गुण से सम्बन्धित भ्रान्त धारणाएं फैली हुई हैं। उनमें से पहली यह कि गुड़ खाने से रक्त दूषित हो जाता है, दूसरी यह कि गुड़ खाने से फुंसी फोड़े निकल आते हैं और तीसरी यह कि गुड़ बहुत ही अधिक गर्मी करता है और उसके खाने से बच्चे बीमार पड़ जाते हैं।

किन्तु उक्त धारणाओं को विज्ञान की कसौटी पर अनुसन्धान करनेवालों ने गलत और भ्रामक ही पाया। गुड़ खाने से रक्त दूषित नहीं होता, किन्तु रक्त के दोष दूर होते हैं और रक्त में वृद्धि होती है। यह भी भ्रामक है कि गुड़ खाने से फोड़े फुन्सियां अधिक निकलते हैं। गुड़ शरीर को चीनी या अन्य पदार्थों के समान गर्मी तो अवश्य प्रदान करता है। किन्तु न तो वह अधिक गर्मी करता है और न बच्चों को बीमार। जबकि चीनी खानेवाले और चीनी को ही श्रेष्ठ माननेवाले चीनी के अवगुणों को नहीं देखते। चीनी दांतों के ऊपरी भाग में एक प्रकार का अम्ल पैदा करती है जिससे दांतों का कैल्शियम खत्म हो जाता है और वे काले पड़ जाते हैं। चीनी के अधिक उपयोगकर्ताओं के कूल्हे भी दुर्बल हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त चीनी में सुक्रोज का अधिक अंश होने के कारण उसे पचाने के लिए आंतों को अपेक्षाकृत अधिक शक्ति का अपव्यय करना होता है। फलतः अधिक चीनी का सेवन करनेवाले अनेक रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं।

विविध रोगों में गुड़ का विभिन्न रूपों में सेवन किया जाता है। पुराना गुड़ अदरख के साथ सेवन करने से कफ, हरड़ के साथ पित्त और सोंठ के साथ सेवन करने से वात सम्बन्धी विकारों को दूर करता है। गुड़ या गुड़ की वस्तुएं चोट से पीड़ित और रोग से अशक्त मनुष्य को शक्ति प्रदान करती है। पाश्चात्य डाक्टरों ने गुड़ को हृदय की कमजोरी दूर करने वाला भी माना है। एक हृदय रोग विशेषज्ञ के अनुसार गुड़ की पपड़ी या गुड़ के बने पदार्थों को खाने से हृदय सशक्त होता है।

महात्मा गांधी द्वारा प्रशंसित 'मिठाइयों का राजा' नामक लेख के लेखक गोपीनाथ गुप्त ने गुड़ से बनी मिठाइयों के गुणों का सुन्दर वर्णन किया है। शहरों में गुड़ के उपयोग को मूर्खता समझनेवालों और उसे पिछड़ेपन की निशानी माननेवालों को गुड़ के गुणों से भलीभांति परिचित होना चाहिए। तब ही वे गुड़ के गुणों का विशेष लाभ ले सकेंगे। भारतीय कृषि जगत में भी गुड़ के अधिक उत्पादन के साथ उसमें सुधार अपेक्षित हैं।

हमारा सहकारी आन्दोलन.....[पृष्ठ 1 का शेषांश]

वर्ग के लोग अपनी सहकारी समितियां बनाने के लिए प्रोत्साहित किए जाएं तथा युवकों और महिलाओं की शक्ति को भी काम में लाया जाएं। सहकारी समितियों, सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंकों तथा अन्यान्य संस्थाओं के बीच सहयोग का विकास हो तथा समितियां किसानों से सीधे कृषि उपज के लिए विपणन और वसूली का काम अपने हाथ में लें। इसके अलावा, सहकारी विकास के लिए पंचायती राज संस्थाओं के सहयोग से एक समन्वित कार्यक्रम चालू किया जाए।

सहकारी तरीका अपनी सहायता आप करने का तरीका है। अतः जरूरी है कि सहकारी आन्दोलन अपनी मजबूती के लिए इस बुनियादी तथ्य को ग्रहण करे। तभी यह आन्दोलन सबल रूप धारण कर सकता है। आज देश में गरीबी दूर करने तथा बेरोजगारी को समाप्त करने के लिए कई कार्यक्रम चालू हैं। यदि हमें इन कार्यक्रमों को सफल बनाना है तो लोगों में सहकारी भावना का विकास करना ही होगा।

उत्पादन वृद्धि के लिए कृषि अर्थशास्त्रियों का संवर्ग बनाया जाए

वी० श्रीनिवास राव

1949-50 में 100 के मुकाबले 1951-52 में कृषि उपज का सूचकांक 91.1 था। वह 1967-68 में बढ़कर 124.6 हो गया था। योजना के प्रथम तीन वर्षों में यह सूचकांक काफी ऊंचा रहा। यह अधिक उत्पादन कुल बोए गए क्षेत्र में 26.2 प्रतिशत और कुल सिंचित क्षेत्र में 7.8 प्रतिशत बढ़ोतरी के कारण ही सम्भव हो सका। पर इससे भी अधिक महत्वपूर्ण रही घनी खेती और नई कृषि नीति।

नई कृषि नीति (तकनीक) का एक बड़ा परिणाम रहा है धान, गेहूं, मक्का, ज्वार और बाजरा की संकर किस्मों की खोज। इन किस्मों में उर्वरक का बड़े पैमाने पर उपयोग, कीटनाशकों का इस्तेमाल और आधुनिक, वैज्ञानिक तकनीकों का अपनाना आवश्यक है। 1966 के खरीफ के मौसम में 7.4 लाख हैक्टेयर भूमि में अधिक उपज देने वाली किस्में बोई गई थीं। 1967-68 में इन किस्मों के अन्तर्गत 40.7 लाख हैक्टेयर भूमि आ गई थी। उर्वरकों की खपत इस प्रकार थी :—नाइट्रोजन 1955-56 में 107,000 मीट्रिक टन से बढ़कर 1967-68 में 1,070,000 मीट्रिक टन, फास्फेट 1955-56 में 19,000 मीट्रिक टन से बढ़कर 1967-68 में 364,000 मीट्रिक टन, पोटाश 1955-56 में 11,000 मीट्रिक टन से बढ़कर 1967-68 में 450,000 मीट्रिक टन। 1955-56 में 24 लाख हैक्टेयर भूमि में कीटनाशकों का प्रयोग किया गया था जबकि 1967-68 में 364 लाख हैक्टेयर में इनका इस्तेमाल किया गया।

चौथी योजना में कृषि उत्पादन में प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य है। इस प्रकार 1973-74 तक अधिक उपज देनेवाली किस्मों के अन्तर्गत 241 लाख हैक्टेयर भूमि आ जाएगी। उर्वरक की खपत भी बढ़ेगी। नए लघु सिंचाई कार्यक्रम के अन्तर्गत 85 लाख हैक्टेयर भूमि पर सिंचाई होने लगेगी। इस दिशा में सफलता पाने के लिए कुएं, नलकूप और पम्पसैट लगाए जाएंगे। ग्रामीण विद्युतीकरण का विस्तार किया जाएगा। फिर ट्रैक्टरों और शक्तिचालित हलों का प्रयोग बढ़ेगा जिससे उन्हें बनाने की क्षमता भी बढ़ेगी। योजना की अवधि में ढाई लाख ट्रैक्टर और 2.3 लाख शक्ति चालित हलों की जरूरत पड़ेगी।

4,000 करोड़ रुपये की विशाल राशि ऋणों के रूप में बांटी जाएगी। यह काम सहकारियों और बैंकों द्वारा किया जाएगा। ऋण देते समय इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि उनका उपयोग उसी काम के लिए किया जाए जिस काम के लिए ऋण दिया जाता है। इस के लिए कृषि अर्थशास्त्रियों की आवश्यकता है।

कृषि अर्थशास्त्री को अर्थशास्त्र का समुचित ज्ञान और कृषि विज्ञान में भी योग्यता हासिल होनी चाहिए। उसे आंकड़े के तरीकों के बारे में जानकारी तथा थोड़ा सा समाजशास्त्र और कानून का ज्ञान भी होना चाहिए।

कृषि अर्थशास्त्री न केवल किसान को वैज्ञानिक प्रणाली से कृषि की उन्नति में सहायता करेगा बल्कि उसकी ऋण अदा करने की क्षमता को प्रमाणित करके उसे वित्तीय संस्थाओं से ऋण प्राप्त कराने में भी मदद करेगा। इसके लिए उसे देश में हो रहे अनुसन्धानों के आधार पर वैज्ञानिक परिमाप बनाने होंगे।

यह बात सच है कि वित्तीय संस्थानों के ऋण विभागों का संचालन कृषि अर्थशास्त्री ही करते हैं। ऋण के लिए आई अर्जियों की वे खुद ही देखभाल करते हैं और इस बारे में उनके निजी परिमाप हैं पर उनकी अपनी सीमाएं हैं। वे अक्सर जरूरत से ज्यादा चौकस रहते हैं लेकिन क्षेत्रीय या वैज्ञानिक समस्याओं के बारे में उन्हें कोई विशेष जानकारी नहीं होती। इसलिए सिंचित खेती की अपेक्षा बारानी खेती में विशेष तकनीकों की आवश्यकता होगी और किसानों को जल व्यवस्था और भूमि से उचित लाभ उठाने के बारे में सलाह देनी होगी। इस काम को इस विषय का विशेषज्ञ ही कर सकता है।

इसके लिए कृषि अर्थशास्त्रियों का एक नया संवर्ग बनाना होगा जो वित्तीय संस्थानों से बाहर रहकर ही इन संस्थानों में लगे कृषि अर्थशास्त्रियों को सहयोग देगा। चूंकि कृषि क्षेत्र एक जैसे नहीं हैं, अतः क्षेत्रीय विशेषज्ञ भी होंगे जो कृषि विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में विशेष योग्यता रखते होंगे। ये निजी तौर पर काम करेंगे और किसानों को अपनी सलाह देने के एवज में फीस लेंगे।

अतः इस संवर्ग को गठित करने के लिए साधन और तरीके ढूंढने होंगे और ऐसा वातावरण बनाना होगा जिसमें वे काम कर सकें। इस सन्दर्भ में यह बात भी जाननी चाहिए कि ऋण की दृष्टि से किसानों की तीन श्रेणियां हैं :— (क) ऐसे किसान जो स्वयं अपने लिए धन जुटा सकें, (ख) ऐसे किसान जो कुछ धन खुद जुटाकर और कुछ ऋण लेकर अपनी खेती कर सकें, तथा (ग) ऐसे किसान जो पूरी तरह ऋण पर ही आश्रित हों।

प्रथम श्रेणी के किसान अमीर तबके के होते हैं तथा उनके पास अपने कृषि क्षेत्र होते हैं। ऐसे किसानों के मामले में सरकार को चाहिए कि कृषि अर्थशास्त्री की सलाह लेना अनिवार्य कर दे और इनसे एक सर्टिफिकेट मांगे जो एक कृषि अर्थशास्त्री ही दे सकता हो और जिसमें यह प्रमाणित किया गया हो कि खेती वैज्ञानिक पद्धति से ही की जा रही है। बाकी दो श्रेणियों के किसानों को यह सलाह दी जाए कि ऋण लेने से पहले कृषिअर्थशास्त्री से सम्पर्क कर लें।

इस तरह कृषि अर्थशास्त्रियों का एक सबल संवर्ग बन जाएगा जो कृषि की उन्नति में विशेष योगदान देगा और कृषि को वैज्ञानिक पद्धति से करवाएगा।

ये कब तक पशुओं जैसी जिन्दगी जीते रहेंगे ?

दुर्गाशंकर त्रिवेदी

'त्रिवेदी जी ! हर कोई आता है, हमें उलटी सीधी बातें समझा बुझाकर हमारी खुशहाली का राग अलापता हुआ अपणां उल्लू सीधा करके चलता बणता है। आदिवासियों का वे क्या कल्याण करेंगे, जिन्हें सदा अपने कल्याण की ही पड़ी रहती है। कहां हैं वे समाजसेवी लोग जो वाकई हमें नारकीय जिन्दगी से उबार लेने में दिलचस्पी रखते हैं। सब प्रगति का राग अलापते हैं पर हमारी समस्याओं पर कोई भी ध्यान नहीं देता है। सब सिर्फ हवा में किले बना लेना चाहते हैं, सिर्फ हवा में।'

आज भी तेरसिंह की जोश भरी मुखाकृति रह रह कर मेरी आंखों के आगे हरी हो उठती है और उसी आवेश भरी मुद्रा में खड़ी रहती है एक प्रश्नवाचक चिन्ह बनकर। मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के बलोला नामक छोटे से ग्राम का वह समाजसेवी युवक कभी कभी आवेश में मेरे समक्ष ऐसे कितने ही प्रश्न चिन्ह खड़े कर दिया करता था।

आज उससे काफी दूर हूं। लेकिन जब तब आदिवासी इलाकों में एक पत्रकार के नाते जाता हूं और शासन के किस्से सुनता हूं तभी तेरसिंह की यह भावना मस्तिष्क पर हथौड़ा मार उठती है। इस मार की चुभन रह-रह कर चुभा करती है और मैं अपने आप से ही सवाल कर उठता हूं कि वे कब तक पशुओं जैसी जिन्दगी बिताते रहेंगे। क्या हम में अब भी उनको नारकीयता से उबारने की सूझ नहीं आई और ये सारे सवाल सिर्फ सवाल ही रह जाते हैं।

अजनबी संसार

मध्यप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र के दक्षिण पश्चिमी सीमावर्ती इलाकों से लगे हुए जिलों में भील,भिलाले, पटलिये, कोरकू, गौड़ आदि आदिवासियों की विपुल बस्तियां हैं। इन बस्तियों में बस्तियों जैसा तो क्या है ? पर हां, हर घर एक अलग संसार है। एक अजनबी संसार, एक निराली दुनिया। देश के इतिहास ने न जाने कितनी ही करवटें बदली हैं, लेकिन इन आदिवासियों के घरों का भूगोल तो कम से कम वही है, जो युगों से चला आ रहा है। जहां खेती के लिए दो बीघा जमीन का टुकड़ा नजर आया, सौ पचास कदम पर बरसाती नाला दिखा, टोकरी नजर आई, चट से इन्होंने वहीं पर अपनी झोंपड़ी बना ली। झोंपड़ी क्या ? उनका अजनबी संसार ही है वह !

किसी भी झोंपड़ी में घुस जाइए, दो पल भी उसमें आप नहीं टिक पाएंगे। 10 फुट चौड़ी 30 फुट लम्बी झोपड़ी में 1 दर्जन मानव प्राणियों का परिवार भी गुजर कर रहा है, तो चार छह गौ के जाए भी जुगाली कर रहे हैं। गौर से देखें तो 5-6 बकरियां, 10-12 मुर्गियां और 1-2 कुत्ते भी इस परिवार के सदस्य के रूप में वहीं पर नजर आएंगे। पशुओं का गोबर पेशाब सड़ रहा है, तो कहीं मुर्गियों की बीट है और बकरियों की मैंगनियां और इन सबकी बदबू में ही अलमस्त है बीसवीं सदी के भारत का नागरिक, एक ऐसा नागरिक जो आप से किसी तरह का शिकवा शिकायत नहीं करता।

समस्याओं की पिटारी

किसी भी आदिवासी को आप जरा निकट से देखिए, परखिए, लगेगा कि वह कई समस्याओं की पिटारी है। सफाई से तो लगता है उन्हें किसी जन्म जन्मान्तर का बैर है। कम से कम 95 प्रतिशत लोग आज भी पाखाना जाते समय पानी का प्रयोग सफाई के लिए नहीं करके काले अंग्रेज बने हुए हैं। सिर पर बीस पच्चीस हाथ का साफा (फेंटा) बांधने वाला आदिवासी युवक आज भी लंगोटी लगाए घूमता फिरता रहता है। गन्दगी से भरी जगह में वह जिन्दगी जी लेने का का अभ्यस्त है। शराब, अन्धविश्वास, काहिली और कर्जों से लगता है उसको पुश्तैनी लगाव है।

दिन रात हाड़ फोड़ घोर परिश्रम करने के बाद भी वह भूखे पेट रह सकता है। सर्दियों में भी नंगा रह सकता है। पर तम्बाकू, शराब पीने को उसे चाहिए ही, वह हर कीमत पर उन्हें प्राप्त करता ही है. पीता है और जिन्दगी को किसी तरह घसीटता हुआ चल रहा है, सभ्य समाज के मुंह पर एक कोढ़ बना हुआ। बच्चे अव्वल तो पढ़ते नहीं, पढ़ें भी तो चार-पांच कक्षा तक खानापूरी भर के लिए और स्कूल छोड़ने के तीन वर्ष बाद फिर वही अंगूठा लगाने की स्थिति में आ जाते हैं।

तरह-तरह की उपेक्षाओं, अभावों में पले होने के कारण ये चोरी, डकैती आदि भी करते हैं। राह चलतों को लूट भी लेते हैं। हर सन्दर्भ में नियति पर विश्वास करके चलने वाली ये अन्ध-विश्वासी कौमें खरा कमाकर भी खोटा खाती हैं, वह भी आधा पेट।

कितने समाज सुधारक, ऐसे हैं जो इनकी व्यक्तिगत समस्याओं में दिलचस्पी लेते हैं ? यदि वाकई लेते ही होते तो आज स्थिति ही कुछ और बन जाती। परन्तु न तो इन्हें जमाने के साथ कदम मिलाकर चलने की जिज्ञासा है और न सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को चिन्ता।

जमाने के साथ-साथ हमें इनको आगे लाना ही है तो आवश्यक है कि हम उनकी समस्याओं की तहें खोजें। इस कार्य के लिए कुछ ईमानदार समाजसेवी आगे आएं और वे कागजी योजनाएं न चलाकर व्यावहारिक तौर पर इस दिशा में काम करें। ये योजनाएं सस्ती और समयानुकूल हों। उन्हें प्रेम से अपनत्व देकर यह कार्य किया जाएगा तो कुछ हो पाएगा।

इधर-उधर दूर दूर बसे हुए उन लोगों को सबसे पहले सामूहिक बस्तियों में रहने के लिए तैयार किया जाए क्योंकि जब तक वे संगठित नहीं होते, बुराइयों से अपना दामन नहीं छुड़ा पाएंगे। साथ ही चाह कर भी कोई सामाजिक कार्यकर्त्ता एक निश्चित समय में सभी लोगों से सम्पर्क भी नहीं कर पाएगा क्योंकि 200 घर वाले गांव तक भी दस-दस बारह-बारह मील के अन्तर से बसे हुए हैं। सामूहिक बस्तियां बसाने से पाठशाला, अस्पताल, स्वच्छ पेयजल तथा अन्य कई नागरिक सुविधाएं उन्हें आसानी से मिल जाएंगी। इस काम के लिए शासन को, समाज कल्याण प्रवृत्तियों में संलग्न संस्थाओं को तथा धर्मादा संस्थाओं को कुछ रकम बतौर सहायता तथा कुछ ऋण के रूप में देनी चाहिए। साथ ही यह भी प्रयत्न हो कि ये मकान आधुनिक सुख सुविधाओं से पूर्णतः परिपूरित न भी हों तो हवादार, प्रकाशदार, तथा ईंट मिट्टी के बने हुए तो हों ही। आजकल ये लकड़ी के या घासफूंस के बने होते हैं और इतने अस्थायी होते हैं कि वे जब चाहें तब इन्हें बदल सकते हैं। इस प्रकार हर परिवार मकान के पीछे ही 15-20 दिन का श्रम व्यर्थ ही नष्ट करता रहता है और चोरी, आगजनी आदि का खतरा तो हमेशा बना ही रहता है।

इन इलाकों में आज जो शिक्षा दी जा रही है, वह भी कतई असन्तोषजनक है। क्षेत्रीय समस्याओं व आवश्यकताओं को देखकर ही यदि शिक्षा का निर्धारण किया जाता तो अच्छा होता। अतः कागजी बुनियादी शिक्षा नहीं, वास्तविक बुनियादी शिक्षा का प्रचार होना चाहिए। इससे दो लाभ होंगे, एक तो उद्योग धन्धे सीखकर बच्चे परिवार की समस्या हल करेंगे। दूसरे आदिवासियों के दिमाग में शिक्षा के प्रति जो हीन-भावनाएं आज घर किए हुए हैं, वे हटेंगी क्योंकि वे समझते हैं कि पढ़ लिखकर लड़का ढोर नहीं चराएगा, खेती नहीं करेगा और घर का काम नहीं करेगा। यही कारण है कि 20-22 वर्षों में इस क्षेत्र में जितना पैसा खर्च किया गया उसकी तुलना में प्रगति सन्तोषजनक नहीं मानी जा सकती हालांकि हालात कुछ बदले जरूर हैं।

अनेक सामाजिक कुरीतियों में भी ये लोग जकड़े हुए हैं। इस दिशा में काफी काम करने की जरूरत है। इनके पंजे से सेवाव्रती समाजसेवी ही इन्हें छुड़ा सकता है, उनका हृदय जीतकर ही कुछ किया जा सकता है। मादक द्रव्य सेवन, व्यभिचार, चोरी, डकैती, आलस्य, कुरीतियों आदि के सन्दर्भ में उन्हें जाग्रत करके जनमत को मोड़ना आज की अहं जरूरत है।

कड़ी मेहनत करके भी आज भी आदिवासी किसान भूखा क्यों है? इस विषय पर भी बहुत कम ध्यान दिया गया है। तरह तरह के अभावों और ऋणों से ग्रस्त इन लोगों के प्रति किसी को दिली सहानुभूति तक नहीं है। इनको परम्परागत बोहरों, जागीरदारों, जमींदारों, साहूकारों आदि के कर्जों से छुटकारा दिलाने की दिशा में काम तेजी से करना आवश्यक है क्योंकि जब तक इनकी आर्थिक स्थिति नहीं सुधरेगी, इनमें सामाजिक परिवर्तन भी नहीं आएगा।

परिवार नियोजन की दृष्टि से इन लोगों में जरूरत से ज्यादा काम करने की जरूरत है क्योंकि बच्चे पैदा करने का औसत इनका काफी अधिक बैठता है। साथ ही इस सन्दर्भ में ये परम्परागत अन्धविश्वासों से ग्रस्त हैं। इनमें नए विचारों और परिवार नियोजन के साधनों और तौर तरीकों का व्यापक प्रचार अत्यावश्यक है।

इस प्रकार सेवा भावी प्रवृत्तियों के पोषक मनोवैज्ञानिकों को इनकी समस्याओं के कारणों आदि की खोज करनी चाहिए। तभी हम इनके कल्याण की महान् चुनौती को स्वीकार कर सकते हैं, इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य कर सकते हैं।

स्थायी कार्यक्रम बने

आदिम जाति कल्याण की दिशा में अनिवार्य है कि कुछ स्थायी कार्यक्रम बनाकर उस पर चला जाए। इन लोगों में रुचि लेने वाले इनको गले लगाकर चलनेवाले सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को इनमें लगाया जाए। सबसे पहले इनके स्थायी विकास की व्यवस्था की जाए। आदिवासियों की सामूहिक बस्तियां बसते ही उनकी कई समस्याएं अपने आप ही हल हो जाएंगी। सामूहिकता की भावना का उनमें उदय होगा, जो उन्हें अपने पैरों पर खड़े होकर प्रगति के लिए प्रेरणा देगी और यह एक महत्वपूर्ण बात होगी।

जो भी सामाजिक कार्यकर्त्ता इनमें काम करें वे उनकी भाषा, परिस्थितियों, रीति रिवाजों आदि से पूरी तरह परिचित हों ताकि उनमें घुलमिलकर काम कर सकें। उनमें अल्प बचत, परिवार नियोजन, शिक्षा और स्वस्थ जीवन के प्रति ललक पैदा करने का प्रयत्न हो। जब तक वे इनमें व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी नहीं लेंगे, प्रगति कमजोर ही बनी रहेगी।

हमारा नैतिक कर्त्तव्य है कि हम इस चुनौती को सहज और सत्य रूप में स्वीकारें और पशुओं की सी जिन्दगी जीनेवाले इन वीर, धीर, साहसी, मनस्वी देशभक्त भारतीय नागरिकों को भी स्वस्थ नागरिक बनाने की दिशा में पहल करें।

किसान का धन

जयसिंह

एक जमाने में बहुत ही दयालु राजा रहता था। वह अपनी प्रजा के दुःखों को दूर करने का सदैव प्रयत्न करता रहता था। राजा रात को भेष बदलकर जाता और स्वयं सारी स्थिति का पता लगाता।

एक रात राजा जब भेष बदल कर एक गली से गुजर रहा था तो उसे एक चबूतरे पर तीन व्यक्ति बैठे दिखाई दिए। इनमें एक लुहार, एक बढ़ई और एक किसान था। राजा एक ओर छिपकर तीनों की बातें सुनने लगा।

किसान ने कहा—भाई! मेहनत से कुछ नहीं होगा—किस्मत में हो तो धन वैसे ही मिल जाता है। देखो न इन अमीर लोगों को। ये कहां जाते है खेतों में काम करने। गादी तकियों पर बैठे हुए लाखों रुपए कमा लेते हैं और फिर इनकी अमीरी पीढ़ियों तक चलती है।

लुहार ने कहा—बात तो ठीक कहते हो, लेकिन मेहनत तो ईश्वर के बराबर है। जो श्रम करता है वह सुख की नींद सोता है। हमारे धर्म शास्त्रों में यही लिखा है। यदि लोग श्रम करना छोड़ दें तो यह दुनिया खत्म हो जाए। किसान अनाज पैदा नहीं करे तो गादी तकियों पर बैठने वाले क्या खाएंगे? हमारा ही धन्धा देखो, भट्टी के सामने बैठकर तपे लोहे को पीट कर कितनी चीजें बनती हैं। ये चीजें न हो तो तुम्हारी खेती चल ही नहीं सकती। मैं तो मानता हूं कि लुहारी धन्धा ही श्रेष्ठ है।

बढ़ई बोला—तुम्हारा कहना ठीक है। मुफ्त के धन के पर लगे रहते हैं, वही धन टिकता है जो श्रम से आता है। यदि मैं लकड़ी की सारी चीजें न बनाऊं तो दुनिया का काम ही नहीं चले। मेरे बनाए हुए पलंग पर राजा सुख की नींद सोते हैं। बाबू लोग कुर्सियों पर बैठते हैं। बच्चे के पालने से लेकर श्मशान तक हमारे ही हाथ की बनी चीजें काम आती हैं। मैं यह मानता हूं कि लकड़ी की कारीगरी से बड़ा धन्धा इस दुनिया में नहीं है।

दोनों की बात सुनने के बाद किसान ने कहा—लेकिन कौन इज्जत करता है तुम्हारे धन्धों की? तुम जो कुछ करते हो अपने पेट की खातिर। समाज में तुम्हें जो दर्जा मिला है वह कोई ऊंचा तो है नहीं। यदि तुम्हें भाग्य से धन मिल जाए तो तुम उसे फैंक थोड़े ही दोगे। दुनिया में धन की माया सबसे बड़ी है। न हो तो इसकी परीक्षा कर लो।

राजा ने इतनी बात सुनी और आगे बढ़ गया। उसके मन में कई विचार आ रहे थे। आखिर जो गुत्थी उसके मन में चल रही थी, वह अब सामने आ गई थी। श्रम और धन के झगड़े में न्याय के लिए उसका मन उतावला हो रहा था।

दूसरे दिन राजा ने मन्त्री को आदेश दिया कि किसान, लुहार और बढ़ई को हाजिर किया जाए। तत्काल तीनों को राज दरबार में हाजिर किया गया।

राजा ने उनसे कहा—मैं तुम तीनों की मदद करना चाहता हूं। हर व्यक्ति की मदद करना मेरा फर्ज है। क्योंकि तुम तीनों आम लोगों अमीर और गरीब सभी के लिए सुख सुविधाओं का निर्माण करते हो, मैं चाहता हूं कि तुम्हारी मदद की जाए ताकि तुम अपने काम में और अधिक तरक्की कर सको।

इतना कह कर राजा ने तीनों से कहा कि वे अन्दर राज भवन के चौक में चले जाएं वहां से जो भी चीज उन्हें पसन्द आए, ले जाएं। कितनी ले जाएं यह उनकी इच्छा पर निर्भर करेगा।

किसान, लुहार और बढ़ई की बांछे खिल उठीं। वे मन ही मन प्रसन्न होते हुए अन्दर गए। वहां एक चबूतरे पर सोने के सिक्कों का ढ़ेर लगा हुआ था, दूसरे चबूतरे पर लोहा रखा था, तीसरे चबूतरे पर बढ़िया लकड़ी का ढ़ेर लगा था।

तीनों ने झांक-झांक कर चबूतरों की परिक्रमा की और फटी हुई आंखों से बार-बार उन ढेरियों को देखा। तीनों चकित थे—क्या लें, क्या न लें। उन्हें केवल एक ही चबूतरे से चीज उठाने की अनुमति थी। एक व्यक्ति एक ही चबूतरे को छू सकता था।

बढ़ई की नजर उस चबूतरे पर थी जिस पर बढ़िया लकड़ियां रखी हुई थीं। उसने सोचा वह इनसे कितनी सुन्दर चीजें बना सकता है? उसने लकड़ियों का गट्ठर उठाया और चल दिया।

लुहार ने देखा फौलाद के बढ़िया छड़ यहां रखे हैं। उसने भी छड़ों का बोझ उठाया और रवाना हो गया।

अब किसान बचा। उसे इन दोनों की बुद्धि पर तरस आया। वह मन ही मन हंसा, किस्मत के बगैर किसी को धन मिलता नहीं। ये दोनों तो सोने को देख ही नहीं पाए, किसान ने अपनी पूरी थैली सोने के सिक्कों से भर ली और चलता बना।

तीसरे दिन राजा भेष बदल कर

बस्ती में निकला। उसी चबूतरे पर किसान, लुहार और बढ़ई बैठे दिखाई दिए। राजा एक ओर छिपकर उनकी बातें सुनने लगा। उसे लगा कि किसान रो रहा है और दोनों उसे समझा रहे हैं।

किसान ने कहा—लेकिन चोर को कैसे पता चला कि मेरे पास सोने के सिक्के हैं! बढ़ई बोला—भाई। सोना है ही ऐसी चीज, वह अपनी ओर लालच और शैतान को खींचता है। तुमने सोने के सिक्के रखे कहां थे?

"मैंने जमीन में गाड़े थे।"

बस यही तो गलती की। चोर समझता है कि सिक्के कहां रखे जाते हैं। नई खुदी जमीन को वह भांप गया और सिक्के ले गया।

लुहार ने कहा—तुमने सिक्कों को खेत में डाला होता तो ये बच जाते। तुम अच्छा खाद और बीज खरीद लेते तो दुगना अनाज तुम्हें मिल जाता।

किसान ने कहा—दुगना अनाज होने पर भी तो मैं उसे बेच कर सोना ही खरीदता। आखिर यह तो समाज की रीत है? अब क्या किया जाए? राजा से फरियाद की जाए।

तीनों राजा के पास गए और किसान ने फरियाद की कि कोई उसका सोना चुरा ले गया है। राजा ने सारी बातें सुन कर बढ़ई से पूछा—

तुमने सोने के बजाए लकड़ी को क्यों पसन्द किया?

बढ़ई ने कहा—मालिक सोने ने तो मेरा घर बर्बाद कर दिया। मेरी पत्नी को गहने का बहुत लालच था। मैं उम्र भर उसके लिए गहने बनवाता रहा, फिर भी उसकी भूख नहीं मिटी। आखिर दुर्दिन आ ही गया और एक दिन जब वह अपने पीहर जा रही थी तो रास्ते में चोरों ने उसे लूट लिया। बाद में पता चला कि लूटने वाले मेरी पत्नी के नातेदार ही थे। उस दिन से मैं सोने से नफरत करने लगा हूं और यह मानता हूं कि उसमें शैतान रहता है। बढ़ई ने लकड़ी का एक सुन्दर आइना राजा को भेंट किया।

राजा ने लुहार से पूछा तो उसने कहा—मेरी कहानी बड़ी करुण है। सोने ने तो मेरी पत्नी की जान ही ले ली। उस दिन से मैं लोहे के अलावा किसी भी चीज को छूता नहीं हूं। आपने जो इस्पात मुझे दिया है उससे मैंने बढ़िया चीजें बनाई हैं और उसने एक तलवार राजा को भेंट की।

राजा ने किसान से पूछा तो उसने कहा—मालिक। क्या बताऊं? आपके राज में न्याय नहीं है। जीवन खतरे में पड़ा हुआ है। चोर उचक्के बहुत हो गए हैं। यह नहीं होता तो मेरे सिक्के चोरी नहीं जाते। मैं जिन्दगी में तीसरी बार ठगा गया हूं। एक बार सारे गहने चोरी चले गए। दूसरी बार सुनार ने खोटे गहने दे दिए तो सिर पीट लिया और इस बार फिर चोर पीछे लग गए।

राजा ने पूछा—यह बताओ कि ऐसी कौन सी चीज है जिसे चोर नहीं चुरा सकता।

थोड़ी देर तीनों चुप रहे और अन्त में बढ़ई और लुहार ने कहा—महाराज! श्रम को कोई नहीं चुरा सकता। किसान की आंखें खुल गई। राजा ने उससे कहा—तुम्हारे सिक्के मैंने ही चुरवाए थे ताकि तुम्हारा मोह भंग हो जाए। अच्छे खाद और बीज से किसान का धन बढ़ेगा। सोना खरीदने से नहीं बढ़ेगा। तुम्हारा श्रम ही सच्चा धन है और उन तीनों को सहायता देकर बिदा किया।

(समाज सेवा से साभार)

◇

शिक्षा कैसी हो?

शिक्षा से मेरा अभिप्राय यह है कि बालक की या प्रौढ़ की शरीर, मन तथा आत्मा की उत्तम क्षमताओं को उद्घाटित किया जाए और बाहर प्रकाश में लाया लाए। अक्षर ज्ञान न तो शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य है और न उसका आरम्भ। वह तो मनुष्य की शिक्षा के कई साधनों में से केवल एक साधन है। अक्षर-ज्ञान अपने-आप में शिक्षा नहीं है। इसलिए मैं बच्चे की शिक्षा का श्रीगणेश उसे कोई उपयोगी दस्तकारी सिखाकर और जिस क्षण से वह अपनी शिक्षा का आरम्भ करे, उसी क्षण से उसे उत्पादन के योग्य बनाकर करूंगा। मेरा मत है कि इस प्रकार की शिक्षा-प्रणाली में मस्तिष्क और आत्मा का उच्चत्तम विकास सम्भव है। अलबत्ता, प्रत्येक दस्तकारी आजकल की तरह निरे यान्त्रिक ढंग से न सिखाकर वैज्ञानिक तरीके पर सिखानी पड़ेगी, अर्थात् बालक को प्रत्येक क्रिया का क्यों और कैसे बताना होगा।

मनुष्य न तो कोरी बुद्धि है, न स्थूल शरीर है और न केवल हृदय या आत्मा ही है। सम्पूर्ण मनुष्य के निर्माण के लिए तीनों के उचित और एकरस मेल की जरूरत होती है और यही शिक्षा की सच्ची व्यवस्था है।

—महात्मा गांधी

कहानी

टीन का डिब्बा

भगवान सहाय त्रिवेदी

सावन के महीने में वैसे ही सूरज बादलों में आंख मिचौनी करता रहता है। फिर शाम को तो लगता है जैसे वह सोने के पानी में नहा कर आया हो। चारों ओर फैली हरियाली पर सोनहली आभा छितरा आई है। टिटहरी का स्वर रह रहकर चीख उठता है और जंगल से लौटती गाय भैंसों के गले में बजते घण्टे किसान महिलाओं को घर पहुंचने का स्मरण कराते ही हैं, जैसे स्कूल की घण्टी बालकों को प्रार्थना में शामिल होने के लिए भागने के लिए विवश कर देती है। शाम होती देखकर मेंढक भी अधिक जोर से टर्राने लगते हैं। पर इन स्वरों को चीरता हुआ एक और स्वर उभरता है रामकिशन की बांसुरी का जो इस सारे प्रान्तों में अजीब सी मादकता उड़ेल जाता है।

सूरज ज्योंही अपनी लालिमा बिखेर कर पश्चिम में क्षितिज की ओर तेजी से आकृष्ट होने लगता है, रामू अपने खेत की मेंड़ पर बैठकर बंशी के स्वर में जरूर अलाप लगाता हैं। यह उसका दैनिक क्रम है। यह उसकी दिनचर्या का एक अंग बन चुका है।

खेत में दिन ढलने के साथ-साथ दूसरे व्यक्तियों का जोश भी थकान के मारे ढलता जाता है पर ज्यों-ज्यों संध्या की घड़ी निकट आती जाती है, रामू के हाथ तेजी से चलने लगते हैं और सूरज छिपते छिपते वह काम से निपट हाथ पैर धोकर मेड़ पर जा बैठता है। गांव के मन्दिर में घड़ियाल और शंख के स्वर फूट पड़ते हैं और इधर गांव के बाहर बंशी का तीखा स्वर गूंजने लगता हैं।

रामू हरजी पटेल का इकलौता लड़का है, घर में रामजी की दया से किसी बात की कमी नहीं, गांव में मान सम्मान भी है और रामू का हंसमुख चेहरा और मीठी बातों के कारण उसे गांव वालों का स्नेह भी खूब मिलता है। रामू बीस के करीब पहुंच गया है, आस-पास के रिश्तेदारों की ओर से कई बार रामू के विवाह की बात चलाई गई लेकिन हर बार हरजी यह कहकर टाल देता कि अभी क्या जल्दी है। रामू की मां की बात हरजी कभी टालते नहीं थे लेकिन इस बारे में उन्होंने उसकी भी एक नहीं सुनी।

लखीपुरा और भांभरी वैसे तो अलग अलग पंचायतें थी लेकिन भांभरी के कुछ खेत लखीपुरा की सीमा में पड़ते थे। इन खेतों में दो खेत भांभरी के सरपंच राघोजी के भी थे। वैसे इन खेतों में सिंचाई का प्रबन्ध नहीं था लेकिन चौमासे की खेती इनमें अच्छी होती थी। खेती से भी ज्यादा इन खेतों में चारा अधिक होता था और राघोजी के पशु इन खेतों में खुले चर सकते थे। राघोजी के बैलों की भी खूब सार संभाल होती थी। हरे चारे के अलावा दाना पानी का भी अच्छा इन्तजाम था। लेकिन बैल तो बैल ही ठहरे। एक दिन शाम को जब राघोजी की बेटी राधा उन्हें चराकर भांभरी लौट रही थी तो वे हरजी के खेत में घुस गए। बेचारी राधा ने काफी कोशिश की उन्हें रोकने की लेकिन बैल वैसे ही मस्त थे, मेंड़ लांघकर टूट पड़े। रामू परली मेंड़ पर बैठा-बैठा यह सब देख रहा था। अपनी खड़ी फसल में बैल हांकने से होने वाले नुकसान के कारण उसे गुस्सा आ रहा था। एक हाथ में लकड़ी और दूसरे में बांसुरी लिए वह भागा और बैलों की रास पकड़कर राधा के हवाले करते हुए सिर्फ इतना ही उसके मुंह से निकला "जब रास थमती ही नहीं तो क्यों इनको ले जाती है।" राधा का मुंह शर्म से लाल हो गया था।

राघोजी कई दिनों से सोच रहा था हरजी से मिलकर राधा की सगाई पक्की कर दें। इस घटना ने उसके इस विचार को पंख दे दिए। अगले दिन राघोजी खुद हरजी के पास आया, हुक्के को गुड़-गुड़ाहट के बीच कुछ बातें हुई और विवाह पक्का हो गया।

दिन जाते देर नहीं लगती और सदा किसी के दिन एक से रहते भी नहीं। रामू और राधा के विवाह को केवल दस बरस ही बीते हैं पर इस बीच घटनाओं ने इतनी जल्दी-जल्दी करवटें बदली कि यह अर्सा युगों के बराबर लगने लगता है। देखने वालों का कहना है कि रामू के विवाह में हरजी ने पसेरियों से तौल कर रुपया न्यौछावर किया था। एक ही तो लड़का था, उसकी शादी में भी तबियत से पैसा न लुटाया तो फिर यह किस काम आएगा? महीनों तक दावतें चलती रहीं थीं। आस पास पांच सात गांवों के भिखारी व अपंग अपाहिज तो जैसे डेरा डालकर लखीपुरा में बैठ गए थे। रोज दोनों टाइम उन्हें भरपेट भोजन जो मिलता था। लखीपुरा से भांभरी तक दो कोस के रास्ते में रथ और गाड़ियों की ठेला पेल ऐसी हो गई थी कि बरात को लखीपुरा से भांभरी

तक पहुंचने में पांच घण्टे लगे थे। हरजी ने जी खोल कर शादी की थी और इसी का जवाब राघोजी ने भी दिया था। पर रामू के विवाह के छः महीने बाद ही एक दिन हरजी को न जाने क्या हुआ। शाम का वक्त था हुक्के पर चिलम भरकर नौकर रख गया था और हरजी ने ज्योंही कश खींचा तो खींचते ही जैसे लकवा मार गया। हरजी निढाल होकर गिर पड़े और गिरे तो फिर कभी न उठे। चौपाल पर बैठे लोग सन्न रह गए। गांव में जिसने सुना भौचक्का होकर खड़ा रह गया। ऐसी मौत गांव में किसी की नहीं हुई न कभी देखी न सुनी। रथ में डालकर हरजी को सांझ पड़ते पड़ते कस्बे के अस्पताल ले गए तो डाक्टर ने कह दिया इनको दिल का दोरा पड़ गया था, अब लाश को ठिकाने लगाओ।

दो बरस बाद राधा को एक लड़का हुआ जैसे चांदी बरसाता हुआ चांद धरती पर उतर आया हो। पण्डितजी ने उसका नाम पंचांग में देखकर किशोर तय कर दिया। हरजी की जो पूंजी पीढ़ियों तक समाप्त न होने वाली मानी जाती थी, हरजी के पलक मूंदते ही न जाने कहां चली गई। वास्तव में हरजी की पूंजी के बारे में लोगों का भ्रम ज्यादा था, वास्तविकता से परिचय कम था। हरजी दुनिया देखे हुए थे इसलिए उन्होंने अपना बारदाना ऐसा बना रखा था। इसी के पीछे रामू के विवाह में उन्हें रुपया उधार मिल गया। किसी को कानोंकान खबर भी नहीं लगी कि रुपया कहां से आ रहा है। चुपचाप उनका मित्र और गांव वाला साहूकार आता और हरजी के इशारे पर हजारों का इन्तजाम हो जाता। लेकिन अब हरजी के स्वर्ग जाते ही साहूकार बहियें लेकर रामू के दरवाजे आ धमका। गांव वालों ने साहूकार का पक्ष लिया तो साहूकार ने दो के चार जोड़े और हरजी की जमीन साहूकार की हो गई केवल एक खेत रामू ने नहीं दिया जिसकी मेंढ़ पर बैठ कर वह बंशी बजाया करता था।

राधा और रामू को फिर भी सन्तोष था। जिस खेत पर वे पसीना बहाते थे उसकी उपज उन्हें मिल जाती थी। किशोर भी अब किशोर अवस्था में प्रवेश करने वाला था। गांव की पाठशाला में वह पढ़ने जाता तो कक्षा के सब लड़कों से पढ़ाई में आगे रहता। गए साल उसे इनाम भी मिला था क्योंकि वह सारे स्कूल में सबसे ज्यादा नम्बरों से पास हुआ था। गांव की पढ़ाई खतम कर अब वह पड़ोस के कस्बे में पढ़ने लगा था। रोज 3 मील जाता और शाम को घर लौट आता। छुट्टी के दिन अपने मां-बाप के साथ खेत के काम में हाथ बंटता। रामू की गृहस्थी धीरे-धीरे ही सही पर सही दिशा में सुख से आगे बढ़ रही थी। पैसा पास में नहीं था पर सन्तोष का सुख तो था। जितना कमाते उतने में गुजर हो जाती थी। जरूरत ज्यादा तो थी नहीं।

पर दुर्घटनाओं ने जैसे रामू का पीछा नहीं छोड़ा था, संयोग की बात थी। कस्बे से जाती हुई बस को पकड़कर और लड़के भी गांव को लौट रहे थे। किशोर भी लटक गया पर हाथ का बस्ता सम्हालने में उसका हाथ छूट गया और किशोर का पांव बस के पिछले पहिए के नीचे आकर बुरी तरह कुचल गया। काफी खून बह गया। बस में जो गांव के लोग बैठे थे उनमें से दो व्यक्ति बालक को लेकर शहर के अस्पताल चले गए और बाकी ने गांव में आकर रामू को खबर दी। रामू खेत से लौट ही रहा था। रास्ते में दुर्घटना की खबर सुनकर पांवों तले की धरती खिसक गई। गांव के समझदार आदमियों ने उसे ढाढ़स बंधाया। शहर जाकर लड़के का इलाज कराओ, यों कच्चा दिल रखने से काम थोड़े ही चलेगा। रामू के सामने शहर के अस्पताल की तस्वीर आ रही है, किशोर एक पलंग पर पड़ा है, डाक्टर कहता है कौन इसके साथ है खून की बोतल के पैसे देने को। बच्चे को काफी खून निकल गया है, खून चढ़ाना जरूरी है। इंजक्शन लगने और खाने की दवा बाजार से लेनी होगी। औ···रामू की आंख खुलती है खून की बोतल के पैसे ? राधा से क्या जाकर कहूं। उस बेचारी के पास पैसे कहां ? एक पाई तो मुझसे छुपाती नहीं, राधा से कोई मतलब सिद्ध नहीं होगा.....तो.....तो चलूं धनजी साहब के पास चलूं। मेरे पिता का मित्र था, काफी अहसान मेरे पिताजी के हैं उस पर, क्या इस घड़ी में भी मदद नहीं करेगा—?

रामू सीधा धनजी की बैठक में पहुंचता है। उसका पथराया हुआ चेहरा देखकर धनजी को बात समझते देर नहीं लगी। किशोर के समाचर उसे पहले ही मिल चुके थे। बड़ी सहानुभूति जताता हुआ बोला—बेटा रामू ! मुझे किशोर की दुर्घटना की खबर से बड़ा दुख पहुंचा है। रुपयों की तुझे जरूरत होगी। अस्पताल में बिना रुपयों के कौन सुनता है। मैं दूर थोड़े ही हूं। रुपए लेजा जितने तुझे चाहिए। पर भैया व्यवहार में बाप बेटे का भी हिसाब होता है। खेत गिरवी रखजा क्योंकि आदमी का मन बदलते देर नहीं लगती।

खेत ! रामू के सिर में जैसे किसी ने लोहे का घन दे मारा। खेत तुझे दे दूं तो फिर·····राधा·····मैं किशोर·····। रामू का सर चकरा गया। दोनों हाथ से माथा पकड़े वह बिना कुछ कहे सुने बैठक से बाहर निकल आया और सीधा घर आकर आंगन में बिछी चारपाई पर धम से गिर गया। दोनों हाथ से वह अब भी अपना माथा पकड़े था जैसे घन की चोट से अब भी उसका सर चकरा रहा हो।

रसोई में से राधा यह देख रही थी, बाहर भागकर आई क्या हुआ ? तबीयत खराब है।

"कोई अवाज नहीं, कोई उत्तर नहीं।"

"क्या बात है बताओगे नहीं ? आज किशोर भी अभी तक नहीं आया।"

[शेष पृष्ठ 33 पर

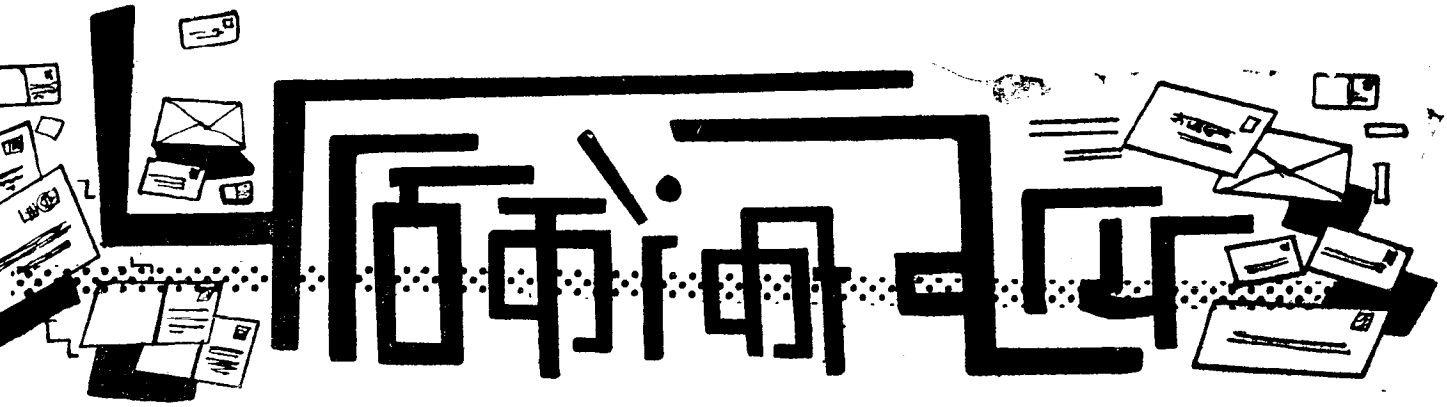

उत्तर प्रदेश पिछड़ा राज्य क्यों ?

भारत के कण कण में ही यूं तो इतिहास भरा हुआ है। पर उत्तर प्रदेश का अपना इतिहास नई और पुरानी कुछ ऐसी विविधताओं से पूर्ण है जिस पर सारे देश को अभिमान है। गंगा, यमुना और हिमालय के अतिरिक्त इसी प्रदेश में राम और कृष्ण ने भी जन्म लिया। स्वराज्य के बाद अब तक के तीनों प्रधान मन्त्री भी देश को इसी प्रदेश ने दिए। जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश भारत का सबसे बड़ा राज्य है। नई जनगणना के आधार पर यहां की आबादी दस करोड़ को छूने की तैयारी कर रही है। कुछ राजनीतिज्ञ तो इसकी विशालता को देखकर इसे प्रदेश नहीं देश ही कहते हैं। जनसंख्या में उत्तरप्रदेश दुनिया का आठवां राष्ट्र बन सकता है। गोरखपुर, बस्ती और मेरठ आदि कई ऐसे जिले इस प्रदेश में हैं जो कुछ देशों से भी बड़े हैं। आकार प्रकार और जनसंख्या में उत्तर प्रदेश जहां भारत का सबसे बड़ा राज्य है वहां आर्थिक दृष्टि से देश का पिछड़ा राज्य भी है।

स्वतन्त्रता के बाद देश के कई राज्यों ने चामत्कारिक उन्नति की है। पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, मैसूर और तमिलनाडु आदि इन्हीं प्रदेशों में हैं। लेकिन उत्तर प्रदेश आज प्रति व्यक्ति आय में राजस्थान और बिहार को छोड़कर देश के बड़े राज्यों में सबसे पीछे रह गया है। दो साल पहले 1969 में प्रचलित भावों के आधार पर पंजाब में प्रति व्यक्ति आय 811 रुपये, महाराष्ट्र की 969 रुपये और नए बने राज्य हरियाणा की 613 रुपये थी जबकि उस समय उत्तर प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय 462 रुपये ही थी। दस साल पहले 1960-61 में स्थायी भावों के आधार पर उत्तर प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय 269 रुपये थी जो 1948-49 में 243 रुपये से बढ़कर यहां तक पहुंची थी। लेकिन इसी अवधि में देश की प्रति व्यक्ति आय 250 रुपये से बढ़कर 293 रुपये हो चुकी थी। बारह वर्ष की अवधि में जब उत्तर प्रदेश के निवासी की आय में 26 रुपये की वृद्धि हुई तब राष्ट्रीय आय में प्रति व्यक्ति 43 रुपये बढ़ चुके थे। इस प्रकार 1948-49 में जो सात रुपये का अन्तर था वह बढ़कर बाद में चौबीस रुपये हो गया।

बिजली के अभाव में जहां इस राज्य में सिंचाई साधनों का विस्तार नहीं हो सका वहां औद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना में भी यह राज्य बहुत पीछे रह गया है। ऐसी ही स्थिति सड़कों और नहरों की भी है। गांव तो दूर अभी बहुत से नगर भी उत्तरप्रदेश के ऐसे हैं जहां सड़क नहीं पहुंची। ज्ञान की रश्मि ने भी अभी तक उन क्षेत्रों को अछूता ही छोड़ रखा है। विद्यालय चिकित्सालय कहीं यदि खुल भी गए हैं तो अध्यापक और डाक्टर वहां जाना पसन्द नहीं करते। आर्थिक प्रोत्साहन देने के बाद भी डाक्टरों का उधर जाने से जी घबराता है। स्वतन्त्रता के पच्चीस साल बाद भी वहां अभी बीमारी और अज्ञान का दबदबा जारी है। विभिन्न राज्यों में सार्वजनिक क्षेत्र के जो उद्योग केन्द्रीय सरकार द्वारा चलाए जा रहे हैं उनमें उत्तर प्रदेश का पांचवां स्थान है। जनसंख्या के अनुपात से तो यह स्थान ग्यारहवां बैठता है। मार्च, 1968 तक केन्द्रीय औद्योगिक संस्थानों में जहां बिहार में 470.7 करोड़, मध्यप्रदेश में 518.2 करोड़, उड़ीसा में 391.5 करोड़, पश्चिम बंगाल में 403.3 करोड़ और तमिलनाडु में 236 करोड़ रुपये लगे हुए थे वहां उत्तर प्रदेश में केवल 125.6 करोड़ रुपया ही इस तरह के कारखानों में लगा हुआ था।

उत्तरप्रदेश के किसानों ने अपना खून पसीना एक करके पिछले कुछ वर्षों में इस राज्य को अन्नोत्पादन में स्वावलम्बी बनाया था। पर प्रकृति के कोप का तो उन बेचारों के पास भी कोई इलाज नहीं है। इस बार गेहूं की फसल पूरे प्रदेश में ही बहुत अच्छी हुई थी। लेकिन जब गेहूं कटकर खलिहानों में आया तो

वर्षा ने उसे उठाने का अवसर ही नहीं दिया। जहा जरा लांक सुखाकर किसान उसे गाहने की तैयारी करते थे वैसे ही वर्षा हो जाती थी। पूरी ग्रीष्म ऋतु इस बार वर्षा ऋतु बनी रही। इससे पूरे प्रदेश में लगभग सवा दो सौ करोड़ रुपयों का गेहूं बर्बाद हो गया। किसानों ने सोचा था—मक्का, बाजरा और धान से ही कुछ सहायता मिल जाएगी। पर यह फसल भी बाढ़ की लपेट में आ गई। इस वर्ष की बाढ़ से उत्तरप्रदेश में अब तक 129 करोड़ रुपये की हानि का पता लगा है।

प्रति वर्ष आनेवाली बाढ़ भी उत्तर प्रदेश के लिए गम्भीर समस्या बनती जा रही है। प्राय: सभी बड़ी नदियों के धरातल रेत भर जाने से ऊंचे हो गए हैं। जहां जरा सा भी कुछ अधिक पानी पीछे से आया वह चारों ओर फैल जाता है। राज्य सरकार भी उस समय तक बाढ़ की विभीषिका का अनुमान नहीं लगा पाती जब तक प्रदेश की राजधानी में पानी नहीं आ जाता। महीनों से बिहार में जल प्रलय हो रही थी। इसी तरह उत्तरप्रदेश में भी पूर्वी और पश्चिमी कई जिले बाढ़ की लपेट में हर साल फंस जाते हैं।

देश में कई और भी ऐसे राज्य हैं जहां प्रतिवर्ष ही बाढ़ आकर उन्हें घेर लेती है। उत्तर प्रदेश उनमें से ही एक मुसीबत का मारा राज्य है। परन्तु अभी तक उसकी रोकथाम की कोई स्थायी योजना नहीं बनी। जरूरत है कि इस सम्बन्ध में एक मजबूत स्थायी योजना बनाई जाए।

कुछ लोग उत्तर प्रदेश के आकार प्रकार को ही विकास में बाधक मान रहे हैं। विशेषकर जब से बगल में बने वे नए राज्य हरियाणा को तेजी से आगे बढता हुआ देखते हैं तब से तो और भी यह चर्चा बल पकड़ रही है। छोटे राज्यों का जहां विकास अच्छा होता है वहां सरकारी कर्मचारी और मंत्री भी एक दूसरे के काम करने के ढंग से अच्छी तरह परिचित हो जाते हैं। पर देश आज जिन परिस्थितियों में से गुजर रहा है उनमें तत्काल कोई निर्णय लेना बिलकुल ठीक नहीं है। शान्ति के समय में फिर से कोई राज्य पुनर्गठन आयोग बने और इन सब समस्याओं पर बिचार करे तब तो बात बन सकती है। देश में आज जहां छोटे राज्यों का होना ठीक नहीं है वहां बहुत बड़े बड़े राज्यों का होना भी देश के लिए एक समस्या है। कोई भी राज्य दो तीन करोड़ से कम जन-संख्या का जहां न हो वहां जो भी राज्य बने वह अपनी सामान्य आवश्यकताओं के लिए स्वावलम्बी हो इसका भी ध्यान रखना जरूरी है। हर समय केन्द्र के कन्धों पर बन्दूक दागते रहना ठीक नहीं है।

प्रकाशवीर शास्त्री

टीन का डिब्बा.....[पृष्ठ 31 का शेषांश]

किशोर का नाम सुनकर जैसे रामू के प्राण फिर शरीर में लौट आए। टूटे-फूटे शब्दों में उसने दुर्घटना का हाल राधा को सुना दिया और धनजी साहूकार की बात भी। राधा को समझते देर नहीं लगी। वह दौड़कर भीतर गई और एक टीन का डिब्बा रामू के हाथ में थमाती, हुई बोली—"लो जल्दी करो, शहर चलो, मैंने यह किस दिन के लिए बचाकर रखे थे।"

डिब्बे में खनखनाते सिक्कों के स्वर से रामू की चेतना लौट आई। बाहर निकाल कर देखा तो दस और पांच-पांच के नोट भी थे कुल मिलाकर कोई अढ़ाई सौ रुपए होंगे। रामू अपनी सारी मानसिक पीड़ा भूल गया।

किशोर को खून की चार बोतलें चढ़ीं। बढ़ता शरीर था इसलिए चोट भी जल्दी ठीक हो गई। किशोर चंगा हो गया। पर अस्पताल से उसे छुट्टी नहीं मिली है। डाक्टर ने कहा है दो रोज और रुकना है। रामू के चेहरे पर फिर सन्तोष की रेखा उभरने लगी है पर उस आश्चर्य ने अभी उसका पीछा नहीं छोड़ा है। वह अब भी टीन के उस डिब्बे का रहस्य जानने को उत्सुक है। राधा किशोर के लिए दूध और दलिया लेकर आई है। मां की ममता के साथ-साथ किशोर दूध और दलिया चख रहा है। रामू अपनी जिज्ञासा को नहीं रोक पाता और आखिर पूछ बैठता है—राधा ये रुपए तुम्हारे पास कहां से आए?

राधा मुस्कराकर रह जाती है, उसकी आंखों की चंचलता के बीच शैतानी झांक रही है। एक क्षण बाद वह कहती है यह मेरी आठ बरस की बचत है। यह डिब्बा किशोर जितना ही पुराना है और आखिर इसी के काम आया।

केन्द्र के समाचार

चिकित्सा केन्द्र

पश्चिम बंगाल में बंगाला देश से विस्थापित बच्चों में पौष्टिक आहार की कमी की समस्या को दूर करने के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा 100 चिकित्सा केन्द्र खोले जा रहे हैं। मैसूर से 47 डाक्टरों का एक दल कलकत्ता पहुंच गया है। ये केन्द्र पश्चिम बंगाल के 5 जिलों में खोले जा रहे हैं। केन्द्रों का विवरण इस प्रकार है :—पश्चिम दीनाजपुर में सात, माल्दा में पांच नदिया में चार, मुर्शिदाबाद में चार और 24-परगना में तीन।

प्रत्येक पौष्टिक आहार चिकित्सा केन्द्र में दो डाक्टर होंगे तथा ये जरूरतमन्द विस्थापित बच्चों का इलाज करेंगे। केन्द्रों के लिए आवश्यक खाद्य पदार्थ और अन्य सामान जैसे तम्बू, चारपाई, बर्तन, आदि भेज दिए गए हैं। बच्चों की अस्वस्थता को ध्यान में रखते हुए 43 केन्द्रों के लिए स्थान निश्चित कर लिया गया है और शेष 57 केन्द्रों के बारे में विचार किया जा रहा है। चिकित्सा कर्मचारी और उपकरण और खाद्य पदार्थ लाने ले जाने के लिए यातायात का प्रबन्ध कर लिया गया है।

योजना पर शीघ्र अमल करने तथा बीच में आने वाली अन्य बाधाओं को दूर करने के लिए केन्द्रीय स्वास्थ्य राज्यमंत्री की अध्यक्षता में एक उच्च अधिकार प्राप्त समिति का गठन किया गया है। स्वास्थ्य मन्त्रालय में इस सम्बन्ध में एक विशेष कक्ष भी खोला गया है। बंगला देश की सीमा से लगे हुए राज्य और केन्द्रशासित प्रदेशों में तीन क्षेत्रीय पौष्टिक आहार अधिकारी होंगे जो राज्य सरकारों के साथ सहयोग तथा सम्पर्क बनाए रखने का काम करेंगे।

विस्थापित बच्चों में पौष्टिक आहार की कमी की रिपोर्ट की जांच करने का काम भारत सरकार ने विशेषज्ञों के एक दल को सौंपा था। उन्होंने योजना बद्ध रूप से 500 पौष्टिक आहार चिकित्सा केन्द्र खोलने का परामर्श दिया था। 100 केन्द्र खोलने की यह योजना पहला चरण है तथा इसमें उन इलाकों पर ध्यान दिया जा रहा है जो पौष्टिक आहार की कमी से बुरी तरह प्रभावित हैं।

स्वास्थ्य मंत्रालय पौष्टिक आहार की कमी से पीड़ित विस्थापित बच्चों पर पूरा ध्यान दे रहा है। इस पूरी योजना पर भोजन को छोड़कर तीन करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च आएगा।

बाढ़ नियन्त्रण

भारत सरकार ने केन्द्रीय जल एवं बिजली आयोग की अध्यक्षता में एक तकनीकी समिति नियुक्त की है जो दामोदर घाटी के निचले क्षेत्र में बाढ़ और जल निकासी में रुकावटों के कारणों का अध्ययन करेगी तथा इनके फलस्वरूप होने वाली क्षति को रोकने के उपाय सुझाएगी।

दामोदर घाटी के निचले क्षेत्रों में पिछले तीन वर्षों से बाढ़ निकासी में रुकावट से खेती को काफी नुकसान पहुंचा है तथा वहां के लोगों को भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। समिति दो महीनों में अपनी रिपोर्ट दे देगी। यह दुर्गापुर बांध से नीचे की ओर जानेवाले पानी की मात्रा को ढ़ाई लाख क्यूसेक तक सीमित करके बाढ़ की भीषणता को कम करने की सम्भावनाओं पर भी विचार करेगी।

परिवार नियोजन

परिवार नियोजन में उत्तम काम करने के लिए प्रथम पुरस्कार उड़ीसा राज्य को दिया गया है। द्वितीय पुरस्कार महाराष्ट्र तथा तृतीय पुरस्कार आन्ध्र प्रदेश को दिया गया है। स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन मंत्रालय में राज्यमंत्री प्रो० डी० पी० चट्टोपाध्याय ने कल जयपुर में आयोजित विशेष समारोह में पुरस्कार दिए।

केन्द्र शासित प्रदेशों में राष्ट्रीय पुरस्कार लगातार दूसरी बार पांडिचेरी को मिला है। पांडिचेरी ने अधिकतम लूप लगाने के लिए एक अन्य पुरस्कार भी प्राप्त किया है।

इसके अलावा उड़ीसा के मयूरभंज जिले, तमिलनाडु के दक्षिण आरकोट जिले के जयादुर्गम स्थित प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा महाराष्ट्र के नासिक जिले की दासवेल पंचायत ने पांच पांच हजार रुपए के पुरस्कार प्राप्त किए हैं।

देश में अधिकतम आपरेशन करने और अधिकतम लूप लगाने के लिए हैदराबाद के डा० विजयकुमार तथा पंजाब के डा० अमरजीतसिंह को पांच-पांच हजार रुपए के इनाम दिए गए हैं। डा० जी० पी० लोमस और डा० (श्रीमती) एस० तनूजा को सर्वोत्तम शोध कार्य के लिए पांच-पांच हजार रुपए के नकद पुरस्कार दिए गए हैं।

सरकारी कारखानों में उत्तम परिवार नियोजन केन्द्र का पुरस्कार भिलाई इस्पात कारखाने को दिया गया है।

योजनाओं का मूल्यांकन

चौथी योजना का मध्यावधि मूल्यांकन करते हुए योजना आयोग ने राज्य सरकारों से अपनी योजनाओं में अब तक हुई प्रगति का मूल्यांकन करने तथा साधनों की कमी के कारणों का पता लगाने का अनुरोध किया है।

राज्यों की योजनाओं की समीक्षा करने पर पता चला है कि 1969-70 और 1970-71 में योजना के साधनों में बहुत गिरावट आई है। इसका कारण यह है कि योजना के पहले तीन वर्षों में गैर योजना व्यय में वृद्धि हुई है जबकि अतिरिक्त साधन जुटाने की दिशा में बहुत कम प्रयास हुआ है।

इसीलिए आयोग ने राज्यों को अतिरिक्त साधन जुटाने तथा गैर योजना खर्च को बहुत कम करने के लिए कहा है, जिससे योजना के लक्ष्य पूरे किए जा सकें। आयोग ने विभिन्न कर तथा राजस्व एकत्र करने के तरीके भी सुधारने का सुझाव दिया है।

मूल्यांकन में यह बात भी सामने आई है कि यद्यपि आर्थिक विकास की ओर समुचित ध्यान दिया है, किन्तु सामाजिक न्याय की स्थापना के कार्य की उपेक्षा हुई है। इस प्रकार जहां बिजली, सिंचाई और मझले तथा बड़े उद्योगों पर काफी धन लगाया गया है, वहां छोटे उद्योगों, सड़कों, शिक्षा, आवास, पेयजल का प्रबन्ध, स्वास्थ्य, पिछड़ी जातियों के कल्याण कार्यों और ग्रामीण कार्यक्रम के लिए पर्याप्त धन नहीं दिया गया है। राज्यों को समाज के कमजोर वर्ग की भलाई के कार्यक्रमों को प्राथमिकता देकर लागू करने के लिए कहा गया है। राज्यों को कहा गया कि वे आवश्यकतानुसार योजना के लिए धन का विभिन्न मदों में फिर से बंटवारा करें।

खाद्यान्न के उत्पादन के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। राज्यों को उर्वरक की खपत घटाने तथा उपज वाली फसलों की खेती को बढ़ावा देने का परामर्श दिया गया है। कई ऐसे मामले भी सामने आए हैं, जहां उपलब्ध सिंचाई व्यवस्था का पूरा लाभ नहीं उठाया गया।

कुछ राज्यों में सिंचाई की सभी बड़ी योजनाएं चौथी योजना के अन्त तक पूरी हो जाएंगी। इन राज्यों की सरकारों को सलाह दी गई है कि इन योजनाओं से उपलब्ध सिंचाई व्यवस्था का उपयोग करने के लिए कार्यक्रम हाथ में लें। उन्हें जांच करके पांचवी योजना के कार्यक्रम शुरू करने की सलाह दी गई है। जिन राज्यों में अभी योजनाएं पूरी नहीं हो पाई है, वे उन्हीं योजनाओं पर काम करते रहें।

आयोग ने पिछड़े इलाकों का पता लगाकर उनके विकास कार्यक्रमों के लिए पर्याप्त धन देने का सुझाव दिया है।

योजना आयोग ने सुझाव दिया है कि विकास की समस्याओं के अध्ययन कार्यक्रम तैयार करने तथा तथा उन्हें लागू करने की दिशा में सतर्क रहने की दृष्टि से अलग एजेन्सियों की स्थापना की जानी चाहिए।

बेरोजगार इंजीनियर

निर्माण तथा आवास मंत्रालय ने केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग को आदेश दिया है कि वह काम देते समय बेरोजगार इंजीनियरों और उनकी पंजीकृत समितियों या सरकारी संगठनों को विशेष रियायतें दें।

इस आदेश के अन्तर्गत लोक निर्माण विभाग काम देते समय बेरोजगार इंजीनियरों को वही रियायतें देगा जो सामान्यतः पंजीकृत सहकारी श्रम समितियों को दी जाती हैं। यदि 20,000 रु० तक के किसी काम को कोई भी पंजीकृत सहकारी श्रम समिति करने को तैयार नहीं होती तो वह काम बेरोजगार इंजीनियरों या उनकी समितियों को सौंपा जाएगा। यह काम उन्हें टेण्डर मंगवाए बिना दे दिया जाएगा।

20,000 रु० से एक लाख रु० तक के काम के लिए तीन प्रतिशत तक का मूल्य अधिमान(प्राइस प्रेफरेन्स) दिया जाएगा। बेरोजगार इंजीनियर से बयाना के रूप में कोई राशि नहीं ली जाएगी, हां उन्हें आवश्यक बैंक गारण्टी अवश्य देनी होगी। इस योजना को एक वर्ष तक आजमाया जाएगा।

विशेषज्ञ समिति

राष्ट्रीय सहकारिता विकास निगम पर नियुक्त की गई एक विशेषज्ञ समिति ने अपनी रिपोर्ट में निगम को कायम रखने की सिफारिश की है, लेकिन साथ ही यह कहा है कि इसे सहकारिता की प्रगति, सहकारिता के क्षेत्र में नवीन सम्भावनाओं का पता लगाने तथा सामंजस्य स्थापित करने और आवश्यकतानुसार सहकारिता के लिए धन जुटाने के लिए प्रभावशाली कार्य करना चाहिए। रिपोर्ट में निगम से सहकारिता की प्रगति के कार्यक्रमों को बनाने और कार्यान्वित करने में राज्य सरकारों की सहायता करने को कहा गया है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि आज जबकि विषमताओं को दूर करने के लिए राष्ट्रीय प्रयास किया जा रहा है, इन निगम जैसी संस्थाओं का महत्व और भी बढ़ गया है। आज की परिस्थितियों में गांवों के सहकारिता संगठनों को सुदृढ़ बनाना नितान्त आवश्यक है, ताकि ये संगठन पिछड़े इलाकों और छोटे किसानों की बीज, खाद, फसल का विक्रय आदि जैसी समस्याओं को दूर करने के लिए कार्य कर सके।

रिपोर्ट में निगम को विशेष रूप से जरूरतमन्द इलाकों में गांव के कमजोर वर्गों की सहायता के लिए सहकारिता, पशुपालन मुर्गीपालन और मछली पालन कार्यक्रमों में सहायता देने का सुझाव दिया गया है। इसके अतिरिक्त निगम को जनजातियों के लिए भी विशेष सहकारिता कार्यक्रम बनाने का सुझाव भी दिया गया है।

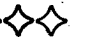

गांधी साहित्य

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

यह ग्रंथमाला लगभग 85 खण्डों में पूरी होगी और महात्मा गांधी जी ने अपने जीवन में जो कुछ कहा और लिखा, उसका पूर्ण विवरण, तिथि क्रम से इस ग्रंथमाला में प्रस्तुत किया जाएगा। इस ग्रन्थावली के 39 खण्ड इस समय बिक्री के लिए उपलब्ध हैं, शेष खण्ड तैयार किए जा रहे हैं।

प्रथम व द्वितीय खण्ड सजिल्द प्रत्येक	रु० 5.50
सधारण (प्रत्येक)	रु० 3 00
तृतीय और उससे आगे के खण्ड (प्रत्येक)	रु० 7.50

पहले 39 खण्ड एक साथ लेने पर 283.50 रु० की जगह केवल 224.00 रु० में मिलेंगे।

पुस्तकालयों और और शैक्षणिक संस्थानों को पूरे सेट के रियायती मूल्य पर 5 प्रतिशत की और छूट दी जाएगी। पुस्तक विक्रेताओं को उनके द्वारा प्राप्त हुए आर्डरों पर प्रति सेट 15 प्रतिशत की छूट दी जाएगी।

आगामी खण्डों के लिए पेशगी आर्डर देने पर प्रति खण्ड 7.50 रु० की जगह केवल 6.00 रु० मूल्य होगा।

गांधी जी के संस्मरण

अनेक क्षण इतने मधुर होते हैं जो मन के तारों को बहुत दिनों तक झंकृत करते रहते हैं। गांधी जी से सम्बन्धित ऐसे ही मधुर क्षणों का संग्रह इस पुस्तक में दिया गया है। पृष्ठ संख्या 136, मूल्य रु० 1.70।

मोहनदास करमचन्द गांधी (ले० नरेन्द शर्मा)

गांधीजी की एक प्रेरक जीवनी — पृष्ठ संख्या 295 — मूल्य रु० 4.25

बापू के आशीर्वाद (ले० एम० के० गांधी)

महात्मा गांधी ने लगभग दो वर्ष तक (20 नवम्बर, 1944 से 10 अक्तूबर 1946) प्रतिदिन 'रोज के विचार' लिखे। ये विचार एक संतप्त आश्रम निवासी को सांत्वना देने के लिए लिखे गए थे। एक-एक विचार अनूठी सूक्ति है।

पृष्ठ संख्या 695 — मूल्य रु० 6.00

महात्मा गांधी चित्रावली

गांधी जी का अलौकिक जीवन आकर्षक चित्रों में। रायल क्वार्टो साइज में सुन्दर आर्ट पेपर पर।

मूल्य रु० 12.50

गांधी कथा (चित्रों में)

गांधीजी की आद्योपान्त जीवन कथा मनोहारी सतरंगे चित्रों में।

बच्चों के लिए आकर्षक। द्वितीय संस्करण, प्रेस में।

गांधी शतदल (सं० सोहनलाल द्विवेदी)

गांधीजी के ऊपर हमारे देश के कवियों ने सुन्दर कविताओं की रचना की है। इस पुस्तक में देश की विभिन्न भाषाओं में गांधीजी पर लिखी 101 सर्वोत्तम कविताएं हैं।

मूल्य रु० 5.00

ऐसे थे बापू (ले० यू० आर० राव)

बापू के जीवन की मुख्य घटनाएं पृष्ठ संख्या 92 मूल्य रु० 1.50

आदर्श विद्यार्थी बापू

गांधीजी के विद्यार्थी जीवन की झांकी। मूल्य रु० 0.70

सब ईश्वर के प्यारे बेटे

अस्पृश्यता निवारण पर गांधीजी के भाषणों का संग्रह। पृष्ठ संख्या 92 मूल्य रु० 1.30

महात्मा गांधी का संदेश (ले० यू० एस मोहनराव)

पृष्ठ संख्या 134 मूल्य रु० 2.60

बापू की वाणी (लेखक निरंकारदेव सेवक)

कविता में गांधीजी के उपदेशों का सारांश मूल्य रु० 0.50

डाक खर्च मुफ्त : तीन रुपए से अधिक मूल्य की पुस्तकें वी० वी० पी० से भी भेजी जा सकती हैं। प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं के ग्राहकों को पांच रुपया या इससे अधिक मूल्य की पुस्तकें खरीदने पर 20 प्रतिशत की बिशेष छूट (कमीशन) दी जाएगी। ग्राहकों को आर्डर भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखनी चाहिए।

सूची-पत्र मुफ्त मंगवाएं

व्यापार व्यवस्थापक

प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1

शाखाएं

बम्बई	कलकत्ता	मद्रास
बोटावाला चेम्बर्स,	आकाशवाणी भवन,	शास्त्री भवन
सर फिरोजशाह मेहता रोड	ईडन गार्डन	35, हैडास रोड

निदेशक, प्रकाशक विभाग, सूचना तथा प्रसारण मन्त्रालय, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1
द्वारा प्रकाशित तथा गंगा प्रिंटिंग प्रैस, सदर बाजार, दिल्ली-6 द्वारा मुद्रित।

Regd. No. D-28